464

2 . II

❀ श्रीः ❀

श्रीस्वाध्याय

[त्रैमासिक-पत्र]

संस्थापक तथा प्रधानाध्यक्ष—

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम आचार्य

श्री १०८ मान् अमृतवाग्भवजी महाराज

संरक्षक—

बघाटमहीमहेन्द्र धर्ममार्तण्ड

राजा साहब श्री १०५ मान् दुर्गासिंहजी बहादुर C. I. E. सोलन (शिमला)

रावराजा साहब श्री १०५ मान् गिरिधारीशरणसिंहजी भरतपुर।

सहायक—

श्री १०५ मती मांजी महाराणी साहिबा (सिरमौरीजी) बघाटराज्य।

श्रीमान् सरदार कुँवर रणदीपसिंहजी नाहन (सिरमौर)

श्रीमान् कुंवर शिवसिंहजी B. A., L-L. B. सेशन जज सोलन।

श्रीमान् कुँवर ईश्वरीसिंहजी सुपरिण्टेण्डेण्ट कोर्ट आफ वार्ड्स उदयपुर (मेवाड़)

श्रीमान् सरदार जगजीतसिंहजी ढिल्लों B. A., L-L. B. नाभा।

सम्पादक और व्यवस्थापक—

ज्योतिषमार्तण्ड ज्योतिर्विद्यारत्न दैवज्ञमणि गणकरत्न

श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्योतिश्शास्त्री

प्रकाशक—

श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (पंजाब)

श्रीस्वाध्यायके नियम तथा उद्देश्य

उद्देश्य—

समस्त संसारको हितकी ओर ले जाना तथा ऐहलौकिक और पारलौकिक मोक्ष (स्वातन्त्र्य) प्राप्त कराना "श्रीस्वाध्याय" का उद्देश्य है।

संचालक गणोंके नियम—

संरक्षक—

(१) जो महानुभाव ३००) तीन सौ रुपयेसे अधिक प्रतिवर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के संरक्षक माने जाएँगे।

सहायक—

(२) जो सज्जन ५०) से ३००) रु० तक प्रति वर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के सहायक माने जाएँगे।

सम्मान्य ग्राहक—

(३) जो सज्जन २।−) से अधिक ५०) रु० तक प्रति वर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के सम्मान्य ग्राहक माने जाएँगे।

श्रीस्वाध्यायके नियम—

(१) 'श्रीस्वाध्याय' (जब तक त्रैमासिक रहेगा तब तक) आश्विन शुक्ल १०, पौष शुक्ल १०, चैत्र शुक्ल १० और आषाढ़ शुक्ल १० को प्रकाशित हुआ करेगा। इस त्रैमासिक संस्करणका वार्षिक मूल्य २।−) है। एक प्रतिका ।।=) नमूना बिना मूल्य नहीं भेजा जाता। श्रीस्वाध्यायके स्थाई ग्राहकोंको हमारी "श्रीग्रन्थमाला" की सभी अद्भुत अमूल्य पुस्तकें बिना मूल्य (मुफ्त) दी जावेंगी। ऐसी सर्वोपयोगी अमूल्य पुस्तकें कोई भी मासिक पत्र प्रतिवर्ष अपने ग्राहकोंको बिना मूल्य नहीं देता। यह 'श्रीस्वाध्याय' के ग्राहकोंको विशेष लाभ है। पर्याप्त संरक्षक, सहायक और ग्राहक होने पर बहुत शीघ्र ही 'श्रीस्वाध्याय' को मासिक कर दिया जायगा।

(२) जिन सज्जनोंके लेख श्रीस्वाध्याय सदनकी ओरसे प्रार्थना पूर्वक मँगवाये जाएँगे वे अवश्य प्रकाशित होंगे। अन्य लेख यदि गवेषणापूर्ण मौलिक और उपयोगी समझे जायेंगे तो यथा समय प्रकाशित हो जावेंगे, अन्यथा नहीं।

(३) लेख, कविता, चित्र, समालोचनार्थ पुस्तकों की दो-दो प्रतियाँ और विनिमय (परिवर्तन) के पत्र पत्रिकायें सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय' सोलन (पंजाब) के पतेसे भेजने चाहिएँ।

(४) लेख, कविता आदि प्रकाशनार्थ सामग्री स्पष्ट अक्षरोंमें कागजके एक ओर ही लिखी होनी चाहिए।

(५) किसी लेखके प्रकाशित करने या न करने, उसे घटाने बढ़ाने तथा उसे लौटाने या न लौटाने का सम्पूर्ण अधिकार सम्पादकको है। जिस अस्वीकृत लेखको सम्पादक लौटाना स्वीकार करें, उसका डाक और रजिस्ट्रीका व्यय लेखक को भेजना होगा। अधूरे लेख नहीं लिये जाते।

विज्ञापन छपाईके नियम—

१ पृष्ठ या दो कालमकी छपाई	२०)	प्रति अङ्क
आधा पृष्ठ या एक कालमकी छपाई	११)	"
चौथाई पृष्ठ या आधा " "	६)	"

पूरे वर्ष या चार अंकोंमें एक पृष्ठकी छपाई ६५) रु० होगी।

त्रैमासिक 'श्रीस्वाध्याय' के पृष्ठका आकार २०×३० अठपेजी। कालम स्थान ८×३ इञ्च है।

आधे पृष्ठसे अधिक विज्ञापन देनेवालोंको 'श्रीस्वाध्याय' बिना मूल्य भेजा जावेगा। छपाई रकम पेशगी प्राप्त होने पर ही विज्ञापन पत्रमें छ[illegible] जावेगा।

विशेष जानने के लिए—

व्यवस्थापक श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन (शिमला) से पत्र व्यवहार करें।

श्रीस्वाध्यायको—

भारतीय विचक्षणवर्ग किस दृष्टिसे देखता है—

'श्रीस्वाध्याय' पर प्राप्त हुई सम्मतियोंमेंसे भारतके सम्मानित धुरन्धर विद्वानों एवं पत्रोंकी कुछ सम्मतियाँ प्रथम और द्वितीय वर्षके गताङ्कोंमें क्रमशः प्रकाशित की गई थीं। उसके अनन्तर 'शरदङ्क' पर प्राप्त हुई अनेकों सुप्रसिद्ध साहित्यमहारथियों और प्रमुख पत्रोंकी सम्मतियोंमेंसे कुछ-एकका संक्षिप्त भाग यहाँ और देखिए—

पत्रकार जगत्के सुप्रसिद्ध वयोवृद्ध विद्वान् अखिल-भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके भूतपूर्व अध्यक्ष दैनिक 'आज' एवं मासिक 'कमला' के प्रधान सम्पादक साहित्यमहारथी स्वदेशभक्त श्रीयुत बाबूराव विष्णु पराड़कर महोदय बनारससे लिखते हैं—

"श्रीस्वाध्यायके प्रथम वर्षके सब और द्वितीय वर्षका प्रथमाङ्क मैंने देखा है। वस्तुतः यह त्रैमासिक अपने ढंगका निराला है। आर्य-संस्कृतिके प्रायः प्रत्येक अङ्ग पर इसमें प्रकाश डाला जाता है। अधुना भारतीय शिक्षित समाज केवल पाश्चात्त्य विचारोंमें डूबासा मालूम होता है। अपनी अधोगति और पाश्चात्त्योंकी उर्ध्वगतिको देखकर स्वभावतः शिक्षित-समाज समझता है कि हमारी संस्कृति ही दोषपूर्ण और उनकी गुणान्वित है। इसका परिणाम होता है आत्म-ग्लानि और परानुकरणेच्छा। पर यथार्थतः हमारी दुर्दशाका कारण है हमारा अपनी संस्कृतिसे दूर जाना। पाश्चात्त्य संस्कृतिके दोष नित्य प्रकट हो रहे हैं। वह गीतोक्त 'आसुरी सम्पत्ति' है। उससे हमें स्वयं बचना और दुनियाँको बचाना है। यह काम अपनी प्राचीन संस्कृतिके अनुशीलन और मननसे ही हो सकता है। "श्रीस्वाध्याय" इसमें समाजका मार्ग-दर्शक हो; यही परमात्मासे प्रार्थना है।"

❀ ❀ ❀ ❀

श्रीयुत भूपेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय एम० ए०; लाइब्रेरियन पब्लिक-लाइब्रेरी प्रयागसे लिखते हैं—

"श्रीस्वाध्यायको मैंने बहुत ही मनोयोगके साथ पढ़ा।...............चतुर्वर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष और ऐतिहासिक, सामाजिक, सामयिक एवं पुरातत्त्वानुसन्धानादि विविध-विषयोंके सुन्दर सुन्दर मौलिक लेख इसकी अपनी खास विशेषता है।...............मैं आशा करता हूं कि यह विविधज्ञान समन्वित पत्र उत्तरोत्तर उन्नतिके शिखर पर पहुँचेगा एवं सर्वप्रिय बन जावेगा।"

❀ ❀ ❀ ❀

हिन्दी संस्कृत और बंगला साहित्यके सुप्रसिद्ध विद्वान् 'विश्वभारती पत्रिका' के सुयोग्य सम्पादक श्री पं० हजारी-प्रसादजी द्विवेदी, हिन्दी-भवन शान्तिनिकेतत (बंगाल) से लिखते हैं—

"मैंने 'श्रीस्वाध्याय' बड़ी रुचिके साथ पढ़ा।........इस पत्रमें मेरे मनन योग्य कई लेख हैं और वे मुझे बहुत पसन्द हैं।........मुझे फिर एक बार अपने महत्त्वपूर्णपत्र (स्वाध्याय) के लिए बधाई देने दीजिए।"

❀ ❀ ❀ ❀

सफल पत्रकार, हिन्दी साहित्यके सुयोग्य विद्वान्, श्री प्रवासीलाल वर्मा मालवीय 'साधना' सम्पादक आगरासे लिखते हैं—

"........पंजाब जैसे हिन्दीके लिए ऊसर प्रान्तसे 'श्रीस्वाध्याय' जैसा उत्तम पत्र निकालना अवश्य ही आपके अथक अध्यवसायका परिचायक है। पत्रके सभी लेख गम्भीर, ज्ञानवर्द्धक और उपादेय हैं।

ग्वालियरके सुप्रसिद्ध राष्ट्रिय साप्ताहिक पत्र 'जीवन' के स० सम्पादक श्री शशाङ्क लिखते हैं—

"............धर्म और दर्शनके गूढ़ सिद्धान्तों और विश्वासोंको आधुनिक रूपसे जनताके सामने रख कर आप हिन्दीकी सेवा तो कर ही रहे हैं, साथ ही प्रकाशका उज्ज्वल भाण्डार देकर हम लोगोंका अज्ञान अन्धकार दूर कर रहे हैं, इसके लिए आप बधाईके पात्र हैं।"

❀ ❀ ❀ ❀

स्व० लोकमान्य तिलक द्वारा संस्थापित महाराष्ट्रका सुप्रसिद्ध राष्ट्रिय अर्ध-साप्ताहिक-पत्र 'केसरी' अपने ता० २५ दिसम्बरके अङ्कमें लिखता है—

"त्रैमासिकाची भाषा हिन्दी असली तरी ती मराठी जाणणाऱ्याना समजण्या इतकी सोपी हिन्दी आहे। त्रैमासिकांतील विषय धार्मिक व आर्यसंस्कृति आणि शास्त्र, विद्या, कला यांच्या विवेचनात्मक असे असतात। यांत आध्यात्मिक, धार्मिक, आर्थिक, ऐतिहासिक आणि आरोग्य विषय असे विभाग पाडले असून त्या त्या विभागाला धरून प्रत्येक अङ्कांत पांच ही प्रकारचे विषय चर्चिले जातात। आरोग्य विभागांत आयुर्वेदाची चर्चा, आर्थिक विभागांत तेजी मंदीची चर्चा, धार्मिक विभागांत तीन महीन्यांत येणारे उत्सव, व्रतें, जयन्त्या, इत्यादिकांची माहिती असें विविध उपयुक्त लेख असून ज्योतिषविषयक लेखांत तीन महीन्यां-तील ग्रहांच्या युत्या, प्रतियोग, दृष्टियोग, अस्तोदय वगैरेंचा ही विचार असतो। अशा भरपूर माहितीच्या लेखांनी भरलेलें आणि आर्य संस्कृति व ज्ञान विज्ञान यानां पोषक असें हें त्रैमासिक अवश्य संग्रहणीय आहे।"

❀ ❀ ❀ ❀

मध्यभारतका सुप्रसिद्ध सांस्कृतिक साहित्यिक मासिकपत्र 'विक्रम' अपने मार्गशीर्ष मासके अङ्कमें लिखता है—

"हिन्दीमें त्रैमासिकोंकी संख्या बहुत कम है। नागरी-प्रचारिणी, हिन्दुस्तानी, भारतीय-विद्या आदि कतिपय पत्रोंको छोड़ अधिक नहीं है। सोलनसे प्रकाशित होने वाला 'श्रीस्वाध्याय' उर्दूके गढ़ पंजाबके पर्वतीय प्रदेशसे वर्ष भरसे निकल रहा है। सोलन, शिमलाशैलकी एक सुन्दर राजधानी है। वहांके महाराजा विद्या-व्यसनी हैं, पण्डितोंके पूजक हैं, स्वयं सहृदय और उदार हैं, 'स्वाध्याय' उन्हींकी छायामें पनप रहा है। आचार्य श्री अमृतवाग्भवजीकी योजना और कृपा-प्रसादसे प्रेरित हो पं० हरदेवजी त्रिवेदी इस पत्रका सुरुचिपूर्ण सम्पादन करते हैं। सम्पादकीय तथा ज्योतिष-सम्बन्धी विविध साहित्यको लेकर यह पत्र विद्वानोंसे सर्वसाधारण तकके लिए उपयोगी साहित्य लेकर निकलता है। 'स्वाध्याय' में प्रायः सम्पूर्ण ही स्वाध्यायका विषय रहता है। ....यह अपने विषयका सुन्दर त्रैमासिक है। सम्पादककी विद्वत्ता, श्रमशीलताकी उस पर पूरी छाप है।"

❀ ❀ ❀ ❀

टिहरी राज्य (गढ़वाल) के राजगुरु संस्कृत साहित्य एवं तंत्रशास्त्रके प्रकाण्ड पण्डित वयोवृद्ध विद्वान् श्री पं० हरिदत्तजी शास्त्री देहरादूनसे लिखते हैं—

"श्रीस्वाध्यायका शरदङ्क पढ़ा। नभोमण्डलके योग प्रतियोग आदि निबन्धने 'स्वाध्याय' शरदङ्कको शरत्कालकी शशाङ्क शोभा दे दी है। यद्यपि भारतवर्षमें कितने ही मासिक-पत्र देखनेमें आते हैं और वे सुन्दर भी हैं परन्तु 'स्वाध्याय' का लक्ष्य केवल भारतीय मानव समुदायके लिए ही नहीं अपितु समस्त सभ्य संसारको शाश्वत शान्ति प्राप्त कराना है। ....इस पत्रमें ज्योतिश्शास्त्रके मार्मिक विषय और विशुद्ध प्राच्य इतिहास तथा राजधर्मको अच्छा स्थान दिया गया है। इसमें महाराजा सोलन नरेशकी उदारता और उच्च सद्भावनाकी प्रशंसा है, ..."

श्रीस्वाध्यायमें क्या क्या होगा ?

विज्ञ पाठकोंको 'श्रीस्वाध्याय' के उद्देश्य तथा नीतिका ज्ञान तो भली भांति हो ही गया है। इसमें जो मोक्षादि पांच प्रधान स्तम्भ रक्खे गये हैं—उनके अन्तर्गत किन २ विषयों पर लेख लिखे जा सकते हैं ? इसकी एक संक्षिप्त सूची हम नीचे दे रहे हैं। इस तालिका द्वारा हमारे विद्वान् लेखकोंको विषय चुननेमें सुविधा होगी।

मोक्षस्तम्भमें—

भारतीय दर्शनोंका संक्षिप्त परिचय। न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा, वेदान्त (शाङ्कर रामानुज निम्बार्क माध्व श्रीकण्ठ भास्कर आदि मतोंका संक्षिप्त सार) शैव (त्रिक प्रत्यभिज्ञा पाशुपत आदि मतोंका संक्षिप्त परिचय) शाक्त (दक्षिण वाम कौल तन्त्र सिद्धान्त त्रैपुर आदि मतोंके संक्षिप्त परिचय) पारमार्थिक मोक्ष, व्यावहारिक मोक्ष आदि आदि।

धर्मस्तम्भमें—

वेदोंका स्वाध्याय। राष्ट्रिय शिक्षा। घरेलू शिक्षा। स्त्री शिक्षा। धर्म रहस्य। धर्ममें स्मृतियोंका स्थान। कल्प सूत्र। स्त्रीधन। दत्तक-दाय। दाय-भाग। प्रायश्चित्त विधान। पर्व व्रतोत्सवादि निर्णय। मुहूर्त्तादि निर्णय। पर्व किस प्रकार मनाये जायें। पर्व और त्यौहारोंका राष्ट्रिय महत्त्व। पर्व मनानेमें धार्मिक दृष्टिसे हानि लाभका विचार। ज्योतिश्शास्त्रानुसार तात्कालिक शुभाशुभ योग और भविष्यवाणियां। राशिफल। खगोलके ग्रह नक्षत्रादिकोंका परिचय।

अर्थस्तम्भमें—

अर्थ शास्त्र। चाणक्यके विचार। घरकी व्यवस्था। पारिवारिक आय व्यय। राष्ट्रको समृद्ध करनेके उपाय। यातायातमें अर्थ प्राप्ति। व्यापार। ज्योतिश्शास्त्रानुसार महर्घ समर्घ (तेजी मंदी) विचार। खानोंसे अर्थ प्राप्ति। आर्थिक दृष्टिसे कलाओंका विचार। पर्व और आर्थिक दृष्टि। युद्धसे आर्थिक हानि लाभ। कृषि (धान्य, फल, शाक-भाजी, ईख, कपास आदिके उत्पादन) से अर्थ प्राप्ति आदि आदि।

कामस्तम्भमें—

आयुर्वेद। शरीरके सभी अवयवोंको सुन्दर सुदृढ स्वस्थ ओजस्वी बनानेके उपाय। दीर्घजीवी बननेके उपाय। रसोईघर। कलाकौशल। घरकी स्वच्छता और पवित्रता। बच्चोंका पालन पोषण। भृत्योंके साथ व्यवहार। पशुपालन आदि आदि।

इतिहासस्तम्भमें—

इतिहास जाननेके साधन (ताम्रपत्र दानपत्र मुद्रा शिलालेखादि) संस्कृत-साहित्यका इतिहास। भारतीय ग्रन्थ और ग्रन्थाकारोंके परिचय। भौगोलिक परिचय (देशकी सीमायें नदियां पर्वत तीर्थ नगर ग्राम आदि) प्राचीनकालमें भूमण्डलके समस्त देश प्रान्त नगरादिकोंके जो नाम और सीमा थी उनके वर्तमान नाम और सीमाका विवेचन। महापुरुषों (दानवीर युद्धवीर धर्मवीर मृत्युवीर शास्त्रार्थवीर विशिष्टविद्वान् भगवद्भक्त राष्ट्रभक्त सिद्ध सती ज्ञानी आदि) के जीवन चरित्र। प्रत्येक वस्तु पर ऐतिहासिक दृष्टिसे विचार।

विशेष—

इसके अतिरिक्त 'श्रीस्वाध्याय' में कुछ सामयिक लेख भी रहेंगे। प्रत्येक अङ्ककी त्रैमासिक अवधिमें जो जो विशेष पर्व त्यौहार या जिन २ अवतारों एवं महापुरुषोंकी जयन्तियां आवेंगी उन उन पर विशेष रूपसे प्रकाश डाला जावेगा। आगामी अङ्क (वसन्ताङ्क) के लिए विद्वान् महानुभाव सर्व प्रथम निम्न विषयों पर सुविचारपूर्ण लेख भेजनेकी अवश्य कृपा करें।

अक्षय तृतीया। श्री भगवान् परशुरामका जीवन-चरित्र। परशुरामकी जन्मभूमि कहां थी ? वर्तमान भारतमें परशुरामके स्थान कहाँ कहाँ हैं ? परशुरामके माता पिता—रेणुका जमदग्नि—के स्थान कहाँ कहाँ हैं ? परशुरामकी पितृभक्ति। दानवीर परशुराम। युद्धवीर परशुराम। भगवान् श्री आद्य शङ्कराचार्यका जीवनचरित्र। श्री नारायण भट्टका जीवनचरित्र। छत्रपति शिवाजीका संक्षिप्त जीवनचरित्र। भक्तवर सूरदासका संक्षिप्तजीवनचरित्र। नृसिंहावतार, आदि २।

सब लेख माघ शु० १५ ता० २० फरवरी १९४३ पर्यन्त "सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय' सोलन (पञ्जाब)" इस पते पर पहुँचना आवश्यक है।

स्वाध्यायोऽध्येतव्यः । ❀ श्रीः ❀ स्वाध्यायान्न प्रमदितव्यम् ।

श्रीस्वाध्याय

[हेमन्तांक]

स्वराष्ट्रशिक्षां गृह्णीयाच्चिकीर्षुः स्वां समुन्नतिम् ।
दूरदृष्टिर्यया भूत्वा न कदाऽपि विषीदति ॥ [राष्ट्रालोक]

वर्ष	सोलन, पौष शु० १० शुक्रवार	संख्या
२	सं० १९९९ वि०	२

तत्तद्राष्ट्रे मानवानां व्यवस्थां शोभासम्पच्छालिनीमार्यरीत्या ।
प्रेम्णा लोके स्थापयँस्तत्त्वदर्शी श्रीस्वाध्यायः कल्पतां विश्वभूत्य ॥
—अ० वा० आचार्य

स्वाध्यायकी आवश्यकता

स्वातन्त्र्यसे इस विश्वमें यदि आप रहना चाहते
संसारके सब सौख्य भी उपभोगना यदि चाहते ।
सम्मानको निज पूर्वजोंके विश्वविजयी चाहते
तो रहें श्रीस्वाध्यायका स्वाध्याय करना चाहते ॥
राष्ट्राऽवमान सहते स्वाध्याय छोड़ देते
स्वाधीनता न गहते धिक् पारतन्त्र्य लेते ।
हे भारतीय वीरों ! क्या योग्य आपको है
आदर्श पूर्वजोंका क्यों आप छोड़ते हैं ॥
—अ० वा० आचार्य ।

भारतकी भारती कौनसी होगी ?

कलितकलिकलानां कल्पिताङ्कं खलानां
कलयत कविलोकाः ! कौतुकं कीदृगेतत् ।
कविकुलकलिताभिः कीर्तनीयां कलाभिः
कटु कथयति काकः काकलीं कोकिलानाम् ॥
—अ० वा० आचार्य

[कलिकी कलाओंका कलन (अभ्यास) खलजनोंको करना बड़ा सरल होता है, यह निश्चय है। क्योंकि यह उन का स्वभाव है। वे कैसे कैसे कौतुकोंकी रचना करते रहते हैं। उस कौतुककी भूमिका भी वे ही निर्माण करते हैं। हे ! (श्री स्वाध्यायके प्रेमी) विद्वान् पाठकों ! आप भी थोड़ा इसको देखिये। कविकुलोंकी सम्मानित कलाओंसे कीर्तनीय कोकिलोंके काकली (मधुर शब्द) को काक कटु कहता है।]

प्रत्येक पुरुष अपना अपना मत प्रकाशित करने में पूर्ण स्वतन्त्र होना चाहिए। स्वतन्त्रता मनुष्यमात्र का जन्मसहज अधिकार है, ये बातें सर्वथा सच हैं। किन्तु उस स्वतन्त्रताका सदुपयोग करना अविद्वान् के हाथकी बात नहीं। विद्वान् भी यदि अनार्यजुष्ट पथके पथिक हों तो उस स्वतन्त्रताका सर्वदा दुरुपयोग ही होगा। दुरुपयुक्त स्वतन्त्रता प्रादेशभर भी देशका हित नहीं कर सकती। सुशिक्षाको छोड़कर संसारमें आर्यत्व प्रतिष्ठाका उपायान्तर कोई नहीं। सुशिक्षित पुरुष ही आर्य हो सकते हैं, कुशिक्षित नहीं। कुशिक्षित पुरुषोंसे लोककल्याणकी आशा करना बालूसे तेल निकालनेसे भी कठिन है। कान्यकुब्जनरेश गोविन्दचन्द्रके दैशिकेन्द्र महाकवि राजशेखरने अपनी काव्यमीमांसामें कितना सुन्दर लिखा है। वे कहते हैं—

"वरमकविर्न पुनः कुकविः स्यात्"

[अशिक्षित होना कुशिक्षित होनेसे कहीं अच्छा है, किन्तु कुशिक्षित होना अतीव निन्द्य है।]

सुशिक्षित होने के लिए स्वराष्ट्रशिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। श्रीराष्ट्रालोकमें कितना सुन्दर लिखा है—

स्वराष्ट्रशिक्षां गृह्णीयाच्चिकीर्षुः स्वां समुन्नतिम् ।
दूरदृष्टिर्यया भूत्वा न कदाऽपि विषीदति ॥

[अपनी सम्यक् उन्नति करनेकी इच्छा रखने वाले पुरुषको चाहिए कि स्वराष्ट्र शिक्षाका ग्रहण करे। उस शिक्षासे प्रत्येक पुरुष दूरदर्शिताको प्राप्त कर लेता है। फिर उसे कभी खेद का अवसर नहीं आता।]

किसी भी विषय पर मत प्रकाशित करनेसे प्रथम उस विषयका पूर्ण स्वाध्याय करना प्रत्येक पुरुषके लिए हितकर है। स्वाध्याय भी सम्प्रदायपूर्वक यथाविधि स्वाध्यायके मर्मज्ञ सदाचारी आचार्यसे ही होना चाहिए। अन्यथा हित नहीं हो सकता। किसी भी विषय पर प्रवचन करनेके लिए अकृतस्वाध्याय को अधिकार ही नहीं प्राप्त होता। इस बातका वर्णन कितनी सुन्दर रीतिसे उपनिषद्में प्रतिपादन किया है। देखिये—

"वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति"

[गुरुसे साङ्ग सरहस्य वेदका स्वाध्याय करनेके अनन्तर आचार्य कोटिमें प्रविष्ट पुरुष अपने शिष्योंको अनुशासन करे।]

अनूचान ही आचार्य हो सकता है तथा उसीको अन्तेवासियों (शिष्यों) को अनुशासन करनेका अधिकार भी होता है।

कोकिल-काकलीको काक भले ही कटु कहें, किन्तु काकमत कुत्सितताको छोड़ कभी वन्द्यता धारण नहीं कर सकता। पाठकवृन्द ! बड़े खेद के साथ आज हमें ये पंक्तियाँ लिखनी पड़ रही हैं। कोकिल भी काकोंके कहने पर उन्हींके स्वरमें स्वर मिलाते हुए कहने लग पड़े हैं कि कोकिल-काकली कटु है, ऐसी आजकी परिस्थिति है। भारतकी भारतीसे अनभिज्ञ पाश्चात्य शिक्षा विदूषित 'हिन्दुस्तानी' भाषाके पक्षपाती भारत की राष्ट्रभाषाके सिंहासन पर ब्राह्मी भारतीको सुशो-

भित नहीं समझते। देवनगरके राष्ट्रमार्गोंको पदपद्मों से सुशोभित करनेवाली ब्राह्मी भारती उन्हें कुरूप तथा अप्रिय दिखाई देती है। असुरनगरके टेढ़े मेढ़े गली-कूंचोंमें पदोंपर पद डालती हुई खरोष्ट्री सुरूप तथा प्रेमास्पद उन्हें दीखती है। पारतन्त्र्यसे निगड़ित राष्ट्रोंमें ऐसा होना आश्चर्य नहीं। वहां तो—

अद्यात् काकः पुरोडाशं श्वा च लिह्याद्धविस्तथा।

[कौवा यज्ञका पुरोडाश खाता है तथा कुत्ता हवनीय द्रव्यका स्वाद लेता है।]

ऐसी परिस्थिति अवश्यम्भावी ही है। यावत्पर्यन्त प्रभाविनी राष्ट्रशक्ति उन्हें ऐसा नहीं कह सकती कि—

त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः।
यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ॥

[तीनों लोकोंका नेता इन्द्र हो, हविर्भाग देवताओंको मिले। तथा यदि आपको जीवित रहनेकी इच्छा है तो पाताल को चले जाएं।] तावत्पर्यन्त सुव्यवस्थितता तथा शक्ति कहां हो सकती है ? अस्तु।

भारतीय भारती सुरभारती है। उसके पदचिह्न खरोष्ट्री कभी नहीं हो सकते, नाहीं खरोष्ट्री पदचिह्नों पर चलना वह हितकर तथा रुचिकर समझती है। सुरभारतीके पदचिह्नतो सर्वदा देवनागरी ही हो सकते हैं तथा देवनागरी पदचिह्नों पर ही चलना उसे रुचिकर तथा हितकर भाता है। 'हिन्दुस्तानी' बोली खरोष्ट्री है। देवनगरके मार्गों पर उसे चलाना उन मार्गोंको दूषित करना है। किन्तु कुशिक्षित पुरुष ब्राह्मी-भारतीका मुकुट खरोष्ट्रीके मस्तक पर रखा देखना रुचिकर समझ रहे हैं। "विनाशकाले विपरीत बुद्धिः"। हन्त ! भगवल्लीला अपार है।

सुरभारती-प्रचुर भारती (वर्तमान भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दी) में लेख पढ़ना तथा प्रवचन सुनना कई अशिक्षित तथा कुशिक्षितोंको अवाञ्छनीय तथा व्यर्थ प्रतीत होता है। वे कहते हैं कि ऐसी भाषा जनसाधारणके लिए कठिनतम है। उनके मतमें असुरभारती-प्रचुर खरोष्ट्री 'हिन्दुस्तानी' बहुत सरल तथा सफल है। उन्हें मुखमें भरा हुआ अमृतका घूँट थूक कर खारा पानी पीनेके लिए ढूँढना भा रहा है। इसी कारण जब भी कभी कोई अंग्रेजीमें व्याख्याता व्याख्यान दे रहा हो तो कभी भी उसको उलहना नहीं देते कि आपकी अंग्रेजी बोली कठिन थी, प्रत्युत ऐसा कहनेमें लजाते हैं। वे सीधे घर जाकर कोश (डिक्शनरी) में उन कठिन शब्दोंका अर्थ ढूंढ कर अपनेको ज्ञानवाला सिद्ध करते हैं। इसी प्रकार उर्दूमें व्याख्यान देने वाला जब अर्बी फारसी के बड़े बड़े अप्रसिद्ध शब्द चुन-चुनकर उनका अपने व्याख्यानमें (भारतमें) दुरुपयोग करता है तो उसको बड़ा (आलिम) विद्वान् समझा जाता है, तथा उसके उपयुक्त उन शब्दोंको 'हम नहीं समझे' ऐसा कहनेमें लज्जाका अनुभव करते हुए उन शब्दोंका अर्थ ढूंढते फिरते हैं। हन्त ! परतन्त्र भारत ! तेरी कियती दुर्दशा है। ये कुशिक्षितोंके चमत्कार अशिक्षितोंमें तथा कुशिक्षितोंमें चल सकते हैं, किन्तु 'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी पाठक भली भांति जानते हैं कि सुशिक्षितोंको ये कभी अपने जालमें नहीं फांस सकते। भारत सदा के लिए कभी भी परतन्त्र नहीं रह सकता। वह स्वतन्त्र हो कर रहेगा। कोकिल दुष्ट करटोंकी कटु बोलीको कभी मधुर नहीं कह सकता तथा अपनी मधुर काकलीको काकोंके कहने पर कटु मानकर कभी नहीं छोड़ सकता, वह स्वतन्त्र हो अथवा परतन्त्र। कोकिल बगुलोंके घर्घरको अथवा काकोंके कांव २ को कभी रुचिकर या हितकर नहीं समझ सकता। देवनगर भारतमें देवनागरी पदचिह्नों पर भारतकी राष्ट्रभाषा भारती ही सर्वदा विहार करेगी। कुशिक्षित तथा अशिक्षित उससे प्रसन्न हों अथवा अप्रसन्न इसकी कोई चिन्ता नहीं। महावैयाकरण तथा महाकवि भर्तृहरिने कितना सुन्दर लिखा है—

लभेत सिकतासु तैलमपि यत्नतः पीड़यन्
पिबेच्च मृगतृष्णिकासु सलिलं पिपासार्दितः।
कदाचिदपि विश्वसन् शशविषाणमासादयेत्
न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत्॥

[सम्भव है कि प्रयत्नसे पीड़ने पर बालूमेंसे तेल निकल आए, प्यासका मारा मृगमरीचिकामें पानी भी पी सके, विश्वास रखने पर कदाचित् शश-

जीवनकी एक झांकी

गताङ्कोंमें पूज्यपाद श्री १०८ आचार्य चरणोंके अलग अलग कई विषयों पर मौलिक लेख निकल चुके हैं। उनलेखों से सन्तुष्ट होकर कई प्रेमियोंने वारम्वार उनकी जीवनीके सम्बन्धमें प्रश्न किये हैं, किन्तु उनकी जीवनी उन्हींके अतिरिक्त प्रायः और कोई नहीं जानता। हमने भी कई बार उनसे अपनी आत्मकथा प्रकाशित करनेके लिए प्रार्थना की, परन्तु वे अस्वीकार ही करते गये। अपने प्रेमी भक्तोंके अत्याग्रहके कारण आत्मजीवनके कुछ अंशों पर प्रकाश डालना अब उन्होंने मान लिया है। उसीके अनुसार उनका यह लेख यहां प्रकाशित हो रहा है। 'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी पाठक इससे लाभ उठाएँगे ऐसी आशा है। —सम्पादक]

गताङ्कोंमें हमारे लेखोंको पढ़कर 'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी पाठक हमें आत्मकथा प्रकाशित करनेका बहुत अनुरोध कर रहे हैं। किन्तु आत्म-कथा सम्पूर्णरूपसे प्रकाशित करना अभी हमारे वशकी बात नहीं। इसके कई कारण हैं। उन कारणोंको प्रकट करना भी अभी उचित प्रतीत नहीं होता। समय आनेपर वह सब स्वयं ही हो जायगा। हां, कुछ अंश आत्म-जीवनके ऐसे अवश्य हैं जिनको प्रकट करनेसे लोकोपकार अवश्य होगा। किन्तु पाठकोंसे विनम्र भावसे एक निवेदन अवश्य है कि उन्हें जो उससे लाभ हों वह पत्र द्वारा हमें अवश्य लिख भेजें। पाठकवृन्द! अब हम आत्म-जीवनकी एक घटना यहां लेखबद्ध कर रहे हैं।

लगभग पौने पांच वर्षकी अवस्था थी, शिवमहिम स्तोत्र कण्ठ हो गया था, प्रतिदिन सायङ्काल सन्ध्या समयमें ठाकुरजीके पास बैठना पड़ता था। घरवालों ने कुछ स्तोत्र तथा कुछ चुने हुए श्लोक कण्ठ करा रक्खे थे। शिवरक्षा, रामरक्षा, गङ्गालहरीके कुछ श्लोक तथा श्रीपञ्चस्तवीके कुछ श्लोक और इधर उधरके कुछ देवताओंके ध्यानादि प्रचुर मात्रामें कण्ठ हो गये थे। और न जाने कहाँ कहाँके श्लोक थे, पर कई अन्यान्य मुक्तक श्लोकादि भी पढ़ा अवश्य करते थे। मातामहालयमें तथा अपने घरमें दोनों ही स्थानोंमें सन्ध्या समयमें मङ्गलदीप जगाने पर उसे प्रणाम करना होता था अनन्तर अपनेसे बड़े सभी लोगोंको वहाँ जो भी उपस्थित हों, प्रणाम करना पड़ता था। भारतीय सभ्यतामें जिनका लालन-पालन हुआ है वे सभी इस प्रथासे परिचित हैं। आज भी यह प्रथा भारतके सभी प्रान्तोंमें थोड़ी बहुत पाई जाती है। इसी प्रकार प्रातःकाल नींदसे जागते ही कुछ स्तोत्र पढ़ने होते थे, उसे हमारे यहां प्रातःस्मरण कहा जाता है। हां, सायङ्कालके पढ़नेके स्तोत्रोंसे प्रातःकाल पढ़नेके स्तोत्र अन्य ही होते थे। शिवमहिम स्तोत्र सायङ्काल पढ़ना होता था। यह स्तोत्र अत्यन्त सुप्रसिद्ध है। काश्मीरमें इसका प्रचार प्रचुर मात्रामें पाया जाता है। पुष्पदन्त नामक गन्धर्वराजने इस स्तोत्रका निर्माण किया है। स्तोत्रके अन्तिम श्लोकोंसे यह बात स्पष्ट है। इसके ऊपर ऐतिहासिक दृष्टिसे विचार फिर कभी किया जायगा।

का सींग भी ढूंढ ले सके, किन्तु प्रतिनिविष्ट मूर्ख (कुशिक्षित) लोगोंके चित्तको प्रसन्न करना सम्भव नहीं।] अस्तु।

अन्तमें हमारी प्रार्थना है कि हमारे इस लेखको 'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी पाठक भली भांति स्वाध्याय करके राष्ट्रभाषाके सम्बन्धमें अपना मत स्थिर करने का प्रयत्न करेंगे।

भगवती श्रुतिकी आज्ञा है कि—

"स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्।"

[आत्मकल्याणकारक शिक्षा ग्रहण करना तथा उसका प्रचार करनेमें कभी प्रमाद नहीं करना चाहिए।] शिवमस्तु। —सम्पादक

एक दिनकी बात है, गर्मी के दिन थे, पूज्य पिताजी घर आये ही थे, हम लोग छत पर बैठे थे। उन्होंने प्यारसे मुझे कहा "महिमन् सुनाओ" मैं भी स्तोत्र सुनाने लगा। वाणी तुतली थी, उच्चारण वर्णोंका स्पष्ट नहीं था, फिर भी स्तोत्र पढ़नेमें बहुत आनन्द आया करता था। कुछ श्लोक सुना दिये। अनन्तर मैंने कहा "इसका अर्थ क्या है ? पिताजी !" पिताजीने कहा "बड़े होने पर बता देंगे" मैं चुप होगया। किन्तु इससे चित्त शान्त नहीं हुआ। चित्त अर्थ जाननेके लिए अत्यधिक व्याकुल हो रहा था। बड़ा बननेकी इच्छा भी बहुत बढ़ रही थी। पिताजी की बड़ी-बड़ी मूछें देखकर मैं भी मन ही मन विचारता था कि मैं भी मूछें बढ़ जानेपर बड़ा हो जाऊंगा। अहा ! बचपन कैसा विलक्षण होता है; उसकी रमणीयता अज्ञानसे ही खिल उठती है। बचपनमें जिन बातोंका बड़ा महत्त्व होता था आज उनके स्मरण आनेपर हँसीसी छूट पड़ती है, अस्तु।

रात हुई। घरके सब लोग सो गये। मैं भी अपने छोटेसे मंजे पर लेट गया, किन्तु नींद चिर समय पर्यन्त नहीं आई। मैं विचार कर रहा था—क्या महिमन्का अर्थ बच्चोंको नहीं आ सकता ? क्या वह बड़ा होनेपर ही आ सकता है ?—कई प्रकारके विचार किये कुछ स्थिर न हो सका। अन्तमें नींद कब आई यह ज्ञात ही नहीं हुआ। किन्तु मैं गाढ़ निद्रामें आनन्दमग्न हो गया था। बचपनकी नींद कितनी मीठी होती है इस बातको सभी जानते हैं, किन्तु उसको व्यक्त करना उसकी मिठासको न्यून करना है। सोते सोते एक स्वप्न देखा—

मैं छोटासा ही हूँ। एक नदीके कूल पर खड़ा हूँ। नदी बहुत बड़ी है, पानी उसका बड़े वेगसे बह रहा है, जल बहुत ही निर्मल है। थोड़ा पानी मैंने पीया। बड़ा मीठा और निर्मल जल पीनेसे चित्त अत्यन्त प्रसन्न हो रहा था। पानी पी कर मैं तटके ऊपर चढ़ आया, वहां देखा कि एक बड़ी-बड़ी मूछें तथा लम्बी डाढ़ीवाला बूढ़ा खड़ा है। लम्बे-लम्बे सुनहले तथा श्वेत सिरके बाल पीठपर लटक रहे थे। डाढ़ी भी श्वेत सुनहली घनी तथा लम्बी थी। मूछें भी पाण्डुता तथा पीलापन धारण कर रहीं थीं। वे एक धोती पहने थे। कन्धे पर केवल एक अंगोछा ही था। पास ही एक मिट्टीकी गागर पड़ी थी, एक कमण्डलु भी पास ही पानीसे भरा धरा था। वे दोनों हाथ ऊपर किये हुए सूरजकी ओर देख रहे थे। साथ ही मुखसे कुछ पढ़ भी रहे थे। उन्होंने अब मेरी ओर देखा। देखकर सस्मित मुखसे मुझसे कहा— "तुम कुछ पढ़े हो ?" मैंने कहा— "जी, हां ! शिवमहिमन् पढ़ा हूँ और भी बहुतसे श्लोक तथा स्तोत्र जानता हूँ।" उन्होंने कहा—"सुनाओ" मैंने कहा— "आप जो श्लोक सुनानेको कहेंगे वही सुना दूंगा।" इसपर उन्होंने कहा— "अच्छा 'मनः प्रत्यक् चित्ते' यह श्लोक सुनाओ।" मैंने भी सुना दिया। इस समय हम दोनों ही धरातल पर बैठे थे। नदी तथा आसपासके प्रदेशकी शोभा देख रहे थे। वे धीरे २ चुपचाप शून्यसे हो रहे थे। मैंने देखा उनकी आँखों से छलछलाता अश्रुप्रवाह मूंछों और डाढ़ीको धो रहा था। मुखपर आनन्दकी उज्वलता तथा स्निग्धता बढ़ रही थी। इस समय उनका मुख कन्दूरीफलके समान लाल हो रहा था। मैं एक टक लगाये उनकी ओर देख रहा था। मेरे मनमें आया मैं इनसे एक बार महिमन्का अर्थ पूछकर देखूं। ये तो डाढ़ी मूछोंवाले हैं, बड़े हैं, ये अवश्य ही अर्थको जानते होंगे। वे सहसा ठहाका मारकर हँस पड़े। फिर कहने लगे—"अहा ! तुम बहुत सुन्दर पढ़ते हो तुम्हारा श्लोक पाठ सुनकर यह नदी और यह जंगल भी प्रसन्न हो रहा है।" मैंने कहा—"बाबाजी ! इस नदीका नाम क्या है ?" उन्होंने कहा— "कुमु" मैंने कहा—"आप कहां रहते हैं ?" उन्होंने कहा— "इसीके तीर पर।" फिर मैंने कहा— बाबाजी ! क्या महिमन्का अर्थ बच्चोंको नहीं बतलाया जाता ?" उन्होंने कहा— "क्यों नहीं।" मैंने कहा—"मेरे पिताजी ऐसा कहते हैं।" वे फिर गम्भीरभावसे कुछ हँसे और कहने लगे—"तुम्हारे पास महिमन् की पोथी है न ?" मैंने कहा—"नहीं हमको बिना पोथीके ही पढ़ाया है।"

उन्होंने कहा—"पोथी पढ़ सकते हो ?" मैंने कहा—"हां पढ सकता हूं।" उन्होंने पूछा—"तुम कै वर्षके हुए ?" मैंने कहा— "दो महीनेके अनन्तर छठा वर्ष लग जायगा।" उन्होंने कहा—"ओह! तब तो तुम अर्थ अवश्य समझ सकते हो। देखो ध्रुव तो पाँच ही वर्षका था जब वह भगवान्के दर्शनोंके लिये जंगलमें चला गया था।" ऐसा कहकर फिर वे चुप हो गये। मैं देख रहा था, वे पुनः शून्यसे हो रहे थे, आँखोंसे आंसू बह रहे थे, मुख वैसा ही लाल और आनन्दसे स्निग्ध हो रहा था। थोड़े समयके पश्चात् वे सचेत हो गये और मुझे अङ्कमें लेकर मुख चूमने लगे। उनकी डाढ़ी और मूंछोंके चुभनेसे मैं घबरासा गया था। वे कभी शिर पर हाथ फेरते थे, कभी मुख पर, कभी सारे ही शरीर पर, कभी गलेसे चिपटा लेते थे। मैं अङ्कमें ही था, किन्तु अर्थ अभी बताया ही नहीं था। उनकी मूंछोंका बाल मेरे गालमें चुभ गया, नींद खुल गई, सपना टूट गया। प्रातःकाल हो गया था, सूरज निकल रहा था। मैं जाग पड़ा, स्वप्नकी बातोंको स्मरण कर रहा था। एक-एक करके सब बातें स्मृति पटल पर आ गईं; किन्तु यह क्या हो गया यह कुछ समझमें नहीं आया। समवयस्क साथी भी जाग रहे थे। हम अब नित्यके खेल-कूदमें फिर लग पड़े, किन्तु स्वप्नकी बातोंसे चित्त और भी अशान्त तथा उद्विग्नसा रहने लग गया था। मैं जितनी भी वस्तुओंको घरमें देखता था या जिन कुटुम्बियोंको देखता था, उनमें से किसीके साथ भी मुझे प्रेम नहीं था। कोई भी मुझे अपना प्रतीत नहीं होता था। इसी कारण मैं बहुत थोड़ा बोला करता था। सभी परायेसे लगते थे। किसी किसी दिन घण्टों तक एक ओर बैठकर मन ही मन कुछ सोचा करता था। किन्तु घरवाले इसका रहस्य नहीं समझ सकते थे। नाहीं मैंने कभी किसीसे कहा। समय आने पर इसका रहस्य भी लोगोंको ज्ञात हो जायगा, अस्तु।

उस दिन सायङ्काल मैं देवदर्शनके लिए अपने पिताजी के साथ गया था। चार-पांच मील दूर उस स्थान पर घोड़ागाड़ीसे ही गये थे। वहां भगवतीके दर्शन किये, फूल-पैसा चढ़ाया। पुजारीने माला प्रसादरूपमें मेरे गलेमें डाल दी। मैंने भी मन ही मन प्रसन्न होकर भगवतीसे प्रार्थना की। उस दिन मङ्गलवार था। वह प्रार्थना यह है—

दुर्गे ! स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि ! का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥

[हे दुर्गे ! आपका स्मरण भयभीत हो कर यदि कोई भी करे तो उसका भय आप दूर कर देती हो। आप उस समय यह कभी नहीं सोचती हैं कि यह मनुष्य है अथवा पशु पक्षी। यह विद्वान् है अथवा मूर्ख, आप जात-पाँतको कभी नहीं देखती हैं। केवल देखती हो कि यह जन्तु भयभीत है और मेरा स्मरण कर रहा है। स्वस्थ दशामें जो आपका स्मरण करते हैं उन्हें परम कल्याणकारक मतिका आप प्रदान करती हैं। सभी प्रकारके लोगोंका तथा सभी प्रकारका परम कल्याण करनेके लिए आपसे अन्य इस संसारमें कौन समर्थ है। दारिद्र्य, दुःख तथा भयको दूर भगा देना यह तो आपका सहज स्वभाव ही है। कारण आपका चित्त सर्वदा दयासे भरा रहता है।]

यह प्रार्थनाका महामन्त्र भी प्रतिदिनके स्तोत्र पाठमेंसे ही था। उस समय अर्थज्ञान न होने पर भी इतना अवश्य ज्ञात था कि यह भगवतीकी प्रार्थना है, तथा इसके पढ़नेसे जगज्जननी प्रसन्न होती हैं। मनमें उसी स्वप्नकी सारी घटनाका विवेचन कर रहा था। भगवतीके मन्दिरकी परिक्रमा की। बाहर की पैड़ी पर क्षण भर बैठकर फिर गाड़ीमें चढ़कर घरको चल पड़े। मार्गमें पिताजीसे मैंने कहा—"मैंने महिम्नकी पोथी लेनी है।" पुस्तक-विक्रेतासे तीन आनेकी पुस्तक क्रय कर ली। इस पुस्तकका मुद्रण वेङ्कटेश्वर मुद्रणालय बम्बईमें हुआ था। इसमें भाषामें भी अर्थ था। मैं बहुत प्रसन्न हुआ। मैंने कई बार अर्थसहित महिम्न् पढ़ा है। स्वप्नके उस श्लोकका

पाठ करते समय स्वप्नकी घटना प्रत्यक्ष सम्मुख खड़ी हो जाती थी, तथा इतनी तन्मयता हो जाती थी कि क्या कहूँ। उसका वर्णन वाणीसे परेकी वस्तु है। उस स्वप्नकी घटनाका उट्टङ्कन आज पर्यन्त मैंने किसीके पास नहीं किया। किन्तु 'क्रुमु' के विषयमें जाननेकी बड़ी उत्कण्ठा थी। कई लोगोंसे पूछा किन्तु 'क्रुमु' का संकेत कुछ नहीं मिलता था। अनन्तर कुछ मास बीत चुके थे। एक दिन महिम्नका पाठ कर रहा था घरके कई लोग वहीं बैठे थे, पाठ करते-करते जब उस श्लोकको पढ़ा तो वही स्वप्न सम्मुख हो गया। अब मैं बारम्बार उसी श्लोकको दुहराने लगा। तीन चार बार पढ़कर चुप हो गया। तथा सहसा ओजसे (जोरसे) हँसने लगा और फिर चुप हो गया। भगवान् जाने घरवाले क्या समझे होंगे। मेरा मुख लाल हो गया था। अनन्तर जब मैं सचेत हुआ तो देखा मैं आस्तरण (बिछौने) पर पड़ा हूं। मुझे बड़ा भारी ज्वर हो रहा था। पिताजी नाड़ी देखकर कह रहे थे—"ज्वर बहुत है।" किन्तु मुझे उस समय भूख लग रही थी, मैंने थोड़ा पानी ही पी लिया। स्वप्नके बाबाजी तथा नदी की स्मृतिसे चित्त व्याकुल हो रहा था, अस्तु।

तीन चार दिनके अनन्तर ज्वर ठीक हो गया, परन्तु व्याकुलता भीतर ही भीतर वैसी ही थी। पिताजीने समझा 'इसको कोई भय हो गया है' कारण मैं नींदमेंसे सहसा चौंक उठता था तथा कुछ बड़बड़ाता था। उन्होंने कुछ पाठ करके मंत्रसे अभिमंत्रित भस्म मेरे शरीरमें लगाई थी, साथ ही मुझे कहा था कि—"श्मशानेष्वाक्रीड़ा" इस श्लोकका पाठ करते जाना फिर सब भय दूर हो जायगा। साथ ही धूप आदि भी जलाई थी। इस कारण अब मैंने भी उस घटना का चिन्तन छोड़ दिया था। किन्तु उस घटनाके चिन्तनने मुझे नहीं छोड़ा। ध्रुव-चरित सुन लिया था। मेरी मातामहीने सविस्तर उसकी कथा सुनाई थी। 'क्रुमु' का संकेत उससे भी न मिला। दो बार भाग निकलनेका भी प्रयत्न किया था, किन्तु असफल रहा। साढ़े नौ बर्षकी अवस्थामें सिन्धु महानदीके दर्शन किये थे, उसका पानी पीनेके अनन्तर उसके तीर पर खड़े खड़े उसी पुराने स्वप्न की घटना पर विचार किया था। किन्तु अब भागनेका साहस नहीं था। पढ़नेमें भी जी नहीं लगता था बुद्धि तीव्र होनेके कारण पाठ शीघ्र कण्ठ हो जाया करता था यह बात अलग है। अस्तु।

अब भी सम्पूर्ण महिम्न् स्तोत्र में मेरे सर्वाधिक प्रिय उस श्लोकके पाठके समय मुझे महान् आनन्द आया करता है और वह स्वप्न नया हो उठता है। किसी भी भयप्रद स्थानमें "श्मशानेष्वाक्रीड़ा" का पाठ भी मैं किया करता हूँ। उससे मुझे पर्याप्त लाभ हुआ है। 'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी पाठक भी उसके पाठसे लाभ उठा सकते हैं। वह श्लोक इस प्रकार है—

श्मशानेष्वाक्रीड़ा स्मरहर ! पिशाचाः सहचराः
चिताभस्माऽऽलेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं
तथाऽपि स्मर्तॄणां वरद ! परमं मङ्गलमसि॥

[हे! अशुद्ध वासनाओंको भगाने वाले परमात्मन्! परशम्भो! आप श्मशानोंमें विहार करते हैं। आपके सहचर हैं पिशाच, आप सारे शरीर पर चिताभस्म लेपते हैं। मनुष्य-शिरकपालोंकी मालाएँ आप धारण करते हैं। इस प्रकार आपकी रहन-सहन घिनौनी अमङ्गल सी है, किन्तु आपका सारा ही आचरण यद्यपि अमङ्गलरूप ही है तो भी आपके स्मरण करने वालोंके लिए आप परम मङ्गलरूप हो जाते हो। कारण आप भक्तोंको वरदान दिया करते हो। अतः आपका आचरण महान् अमङ्गलरूप यदि किसीकी दृष्टिमें है तो रहता रहे, हमारे लिए तो आप परम मङ्गलरूप ही हैं; क्योंकि हमें आप मनमांगा देते रहते हो।]

स्वप्नके बाबाजीका तथा 'क्रुमु' का दर्शन पुनः कभी नहीं हुआ, किन्तु आजसे लगभग सातवर्ष पूर्वकी बात है, एक बन्नूका रहने वाला ब्राह्मणकुमार लाहौरमें मिला था। उसके साथ बात-चीत हो रही

थी। उसने बन्नू आनेके लिए प्रार्थना की। उसपर मैंने कहा—"तुम्हारे यहाँ की जलवायु कैसी है?" उसने उसी प्रसंगमें कहा कि—"हमारे नगरके पास ही 'कुर्रम' नदी बहती है उसका जल बहुत ही अच्छा है।" 'कुर्रम' नदी सुनते ही सहसा बचपनकी स्वप्न-स्मृति जाग उठी। अपने मन ही मन मैंने 'कुर्रम' को अपनी 'क्रुमु' मान लेनेका साहस किया है। कई बार उसके दर्शन करनेका विचार किया; किन्तु अद्यापि सफल नहीं हुआ हूँ। एक वैदिक मन्त्रमें नदियोंके नामोंके साथ 'क्रुमु' नाम भी आया है। किन्तु यह 'कुर्रम' ही है अथवा और कोई इसके सम्बन्धमें विद्वानोंका निर्णय क्या है यह ज्ञात नहीं। मेरा अपना विचार तो मैंने प्रकट कर ही दिया है। अस्तु।

लीजिए अब वह मेरा सर्वाधिक प्यारा श्रीशिव-महिम्नस्तोत्रका श्लोक भी सुन लीजिए—

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः।
यदाऽऽलोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्ज्यामृतमये
दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान्॥

[संयमी पुरुष मनको पश्चिम मुख चित्तमें उन सभी प्रकारके अनुकूल विधानोंसे स्थिर करनेके अनन्तर प्राणवायुको वशमें कर लेते हैं। अनन्तर वे योगी शान्तचित्त होकर किसी अनिर्वचनीय रहस्य-भूत तत्त्वका अपने आपमें साक्षात्कार प्राप्त करते हैं, जिसके साक्षात्कारसे एक महान् विलक्षण आनन्द प्राप्त होता है, मानो अमृतसे भरे बड़े भारी ह्रद (प्राकृतिक अगाध तलाव) में डुबकी ही लगा ली हो। इस समय उनके शरीरके रोमरोममें हर्ष हो रहा होता है, तथा आनन्दाश्रुओंसे उनकी आंखें डबडबाई रहती हैं। इस प्रकारके असीम आनन्द-सागरमें बारम्बार डुबकियां लगाते हुए वे जिस अगाध रहस्यभूत वस्तुतत्त्वको अपने आपमें धारण करते हैं, हे भगवन्! वह वस्तुतत्त्व आप ही हैं। ऐसा उन तत्त्वदर्शी परम शान्तिमान् परिपूर्णानन्द-निमग्न महात्माओंका निश्चय है।]

'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी पाठकों! यह श्लोक मेरे हृदयका जीवन सर्वस्व है। मैंने इसका आनन्द प्रत्यक्ष स्वयं अनुभूत किया है। बचपनमें स्वप्नके बाबाजीकी दशा जो क्रुमुके तीर पर स्वयं मैंने देखी है वह अब कभी कभी स्वयं अनुभूतिमें आने लग गई है। किन्तु बाबाजीका पुनः दर्शन न होना बड़ा अखरता रहता है। अहा! वह क्रुमुका तीर कितना रमणीय था। अहा! वे बाबाजी कितने दर्शनीय थे। उनका अपने उत्सङ्गमें लेकर मुझे चूम चूमकर प्यार करना कभी भी मैं भूल नहीं सकता।

वाह! वाह!! मैं भी महान् धन्य हूँ। इस लेखसे पाठक भी अवश्य लाभ उठाएँ। यह बात आज मैंने सर्व प्रथम प्रकट की है। मेरे जीवनमें बीसियों ऐसी घटनाएँ घटी हैं कि उनके स्मरणमात्रसे मैं भी आश्चर्य चकित हो जाता हूं। यथावसर उनपर प्रकाश डाला जायगा। शिवमस्तु।

—अ० वा० आचार्य

भगवती श्रीसीता

[लेखक—विद्यावागीश वि० भू० श्री पं० दीनानाथजी शर्मा सारस्वत शास्त्री]

गताङ्कमें 'श्रीसीता जयन्ती' पर प्रकाश डालने की प्रेरणा की गई है; परन्तु हम उसमें श्रीसीताकी उत्पत्ति विषय पर कुछ विचार 'श्रीस्वाध्याय' के पाठक महोदयोंकी सेवामें उपस्थित करते हैं।

गत दिनोंमें एक उत्सवमें श्रीदलपति शास्त्री नामक किसी उपदेशकने सीतोत्पत्ति के विषयमें एक नई बात कही कि—"सीता भूमिसे उत्पन्न नहीं हुई, किसीने उसे खेतमें डाल दिया था; जनकने उसे वहां पड़ा पाया, उठा लिया और अपनी लड़की बना लिया।" उक्त महाशयने रामायणकी कथा करते हुए यह बात कही।

हम भी आज इस पर कुछ लिखना उचित समझते हैं। बाल्मीकि रामायणमें उक्त बात किस स्थलमें कही गई है, यह उस महाशयने नहीं बतलाया। वास्तवमें उसकी उक्त कल्पना निर्मूल है। रामायणके मतमें सीता पृथिवीसे ही उत्पन्न हुई है। वह मानुषी नहीं, किन्तु अयोनिजा देवी है। देखिये—

सबसे पूर्व प्रष्टव्य यह है कि—जनकको सीता भूमि पर पड़ी मिली; रामायणानुसार उसे वहां कौन फैंक गया, और क्यों फैंक गया? क्या आजकलकी भांति उस समय भी किसी विधवा स्त्रीने विवाहकी आज्ञा न होनेके कारण कामान्ध बनकर जार कर्मसे लड़कीको पैदा किया, फिर अपने कलङ्कित होने के डरसे उसे खेतमें गिरा दिया? अथवा किसी २०-२४ वर्षकी कुमारीने तब आजकलकी भांति विवाहमें देरी देखकर कामुक हो व्यभिचार द्वारा किसी लड़कीको जन्म देकर अपने बचावके यिये उसे भूमि पर डाल दिया? अथवा अधिक कन्याओंको उत्पन्न होता देखकर किसीने खिन्नतासे अन्तिम कन्याको भूमि पर गिरा दिया? अथवा कन्योत्पत्ति में अपमान देखकर किसीने उसे खेतमें डाल दिया?

इनमें व्यभिचार पक्ष तो निर्मूल है, क्योंकि राजा जनक स्वयं धर्मात्मा थे, व्यभिचारी नहीं। तब उनकी प्रजामें व्यभिचार सम्भव नहीं, क्योंकि—

राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठाः पापे पापाः समे समाः।
लोकास्तमनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजा॥
यथा हि कुरुते राजा प्रजा तमनुवर्तते
(बाल्मीकि० ७।४३।१६)

यद्वृत्ताः सन्ति राजानस्तद्वृत्ताः सन्ति हि प्रजाः
(बाल्मीकि० २।१०६।१६)

इत्यादि प्रमाणोंसे हमारा ही पक्ष पुष्ट है।

इस प्रकार राजा जनकके व्यभिचारी न होनेसे उसकी प्रजा भी व्यभिचारिणी सिद्ध न हुई। शास्त्र की आज्ञा न होनेसे यद्यपि उसके राज्यमें विधवा विवाह नहीं हुआ करता था; तथापि उसके राज्यमें व्यभिचार कहीं नहीं माना गया, अतः व्यभिचार की शङ्का तो निर्मूल ही सिद्ध हुई। इधर रामराज्यमें जबकि धार्मिकता होनेसे—

'नार्यश्चाऽविधवा नित्यं भविष्यन्ति पतिव्रताः'
(१।१।६१)

विधवाओं का अभाव दिखलाया गया है।

तस्मिन् पुरवरे हृष्टा धर्मात्मानो बहुश्रुताः (१।५।६)
कामी वा न कदर्यो वा नृशंसः पुरुषः क्वचित्
(१।५।८)
सर्वे नराश्च नार्यश्च धर्मशीलाः सुसंयताः (१।५।६)
न क्षुद्रो वा न तस्करः न चावृत्तो न सङ्करः (१।५।१२)

इस प्रकार दशरथ राजाके भी धार्मिक राज्य होनेसे तत्रत्य नरनारियोंका धर्मात्मा होना, कामी न

होना, निर्दयी, चोर तथा सङ्करता रहित होना बतलाया गया है। इसी प्रकार उसके पड़ौसी धार्मिक जनकके राज्यमें भी विधवाओंका न होना, तथा नरनारियोंका कामी एवं निर्दयी न होना स्वाभाविक है।

यह बात भी अवश्य विचारणीय है कि व्यभिचारसे विधवाएं पुत्र पुत्री स्वयं तो उत्पन्न नहीं कर सकती, वहां पर पुरुषसङ्गकी ही आवश्यकता होती है। परन्तु जबकि वहांके पुरुष धार्मिक थे, स्वैराचारपरायण नहीं थे; तब विधवाएं भी स्वैरिणी कैसे हो सकतीं। छान्दोग्य उपनिषद्में महाराजा अश्वपति की घोषणा प्रसिद्ध है—

'न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः।
नाऽनाहिताग्निर्नाऽविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः॥
(५।११।५)

इस पद्यका चतुर्थपाद विचारणीय है कि—मेरे राज्यमें कोई स्वैरी अर्थात् व्यभिचारी पुरुष ही नहीं है; तब स्वैरिणी अर्थात् व्यभिचारिणी स्त्री ही क्योंकर हो सकती है? इससे स्पष्ट है कि—स्त्रियोंके व्यभिचारमें पुरुष समाज ही दोषी हुआ करता है। अश्वपतिके राज्यकी भांति धार्मिक जनकके राज्यमें भी धार्मिकताके कारण, व्यभिचारी पुरुष न होनेसे, व्यभिचारिणी स्त्रियोंका अभाव स्वतः सिद्ध हो गया।

तब फिर जनकके राज्यमें व्यभिचारसे लड़की कैसे उत्पन्न हो सकती है? उसके राज्यमें निर्दयता न होनेसे निर्दयतापूर्वक लड़कीको कौन गिराता? उन दिनों धन-समृद्धि भी पर्याप्त थी; तब कन्याओंकी बहुतायत में भी भला किसको विषाद हो सकता था? यदि उसके राज्यमें कन्याओंकी उत्पत्तिमें अपना अपमान माना जाता; तब जनकके भाई कुशध्वजने भी अपनी लड़कियोंको क्यों नहीं मरवा डाला? यदि कन्याओंको वहां पर मार दिया जाता था, तो वहां पर उत्पत्ति कैसे हुआ करती थी?

जबकि उसके राज्यमें निर्दयता नहीं थी; तब किसीने अपनी लड़कीको कैसे फैंक दिया? इधर राजा जनक ऋतुमती कन्याविवाहके पक्षपाती न थे। तभी तो उन्होंने सीताका विवाह छठे ही वर्षमें कर दिया था। (इस विषयमें हम फिर कभी लिखेंगे) तब राजदण्डके भयसे उसके राज्यमें भी ऋतुमतीत्व से पूर्व ही कन्याओंका विवाह स्पष्ट है। तब फिर किसी भी कुमारीके विवाहसे पहले ऋतुमती न होनेसे ऋतुमूलक कामभावके उदय न होनेके कारण, और ऋतुमतीत्वमें पतिराहित्य न होनेसे तन्मूलक व्यभिचार हो ही नहीं सकता। इस प्रकार वादियोंकी सभी सम्भावनाएं कट गईं। इधर श्रीरामचन्द्र जैसा मर्यादा पुरुषोत्तम—जो धर्मशास्त्रसे अविरुद्ध आचार वाला हो, तथा लोकापवादसे डरने वाला हो (यह बात सीता निर्वासनमें प्रत्यक्ष है) वह व्यभिचारसे उत्पन्न हुई अज्ञात कुलशील कन्याको पत्नी रूपमें कभी स्वीकार नहीं कर सकता।

इधर राजा जनक बड़ा धार्मिक, शास्त्रज्ञाता तथा शास्त्रानुसार चलने वाला था। वह वर्णव्यवस्था जन्म से मानता था। तभी तो विद्वान् एवं सुकर्मा होते हुए भी उसने अपने आपको ब्राह्मण कभी नहीं कहा, किन्तु जन्मसे क्षत्रिय होनेसे अपने आपको क्षत्रिय ही माना। तब भला वह सङ्करता को क्यों चाहता? अज्ञात, कुलशील तथा किसीसे गिराई हुई, व्यभिचारमूलक उत्पत्तिकी शङ्का वाली लड़कीको अपनी पुत्री कैसे बनाता?

वास्तवमें सीताको पृथिवीमें किसी पुरुष वा स्त्रीने नहीं गिराया था। किन्तु वह पृथिवीसे उत्पन्न हुई थी। यदि वह किसीके द्वारा गिराई जाती; तब उसे रामायणमें 'अयोनिजा' न कहा जाता, किन्तु 'योनिजा' ही कहा जाता। परन्तु रामायणमें उसे भूतलोत्पन्न होनेसे 'अयोनिजा' कहा गया है। जैसा कि—बालकाण्डमें—

अथ मे कृषतः क्षेत्रं लाङ्गलादुत्थिता ततः (१।६६)
क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्ना सीतेति विश्रुता।
भूतलादुत्थिता सा तु व्यवर्धत ममात्मजा॥
वीर्यशुल्केति मे कन्या स्थापितेयमयोनिजा।
भूतलादुत्थितां तां तु वर्धमानां ममात्मजाम् (१।६६।१५)

सुतामयोनिजां सीतां दद्यां दाशरथेरहम्। (१।६६।२७)

यह जनकका वाक्य है। यहां पर सीताकी भूतल से उत्पत्ति तथा अयोनिजता स्पष्ट ही है।

न केवल बालकाण्डमें ही यह कहा गया है, अपितु अयोध्याकाण्डमें भी। नाहीं केवल जनकने प्रत्युत सीताने भी अपनी उत्पत्ति पूर्व प्रकारसे ही कही है। जैसे कि—

तस्य लाङ्गलहस्तस्य कृषतः क्षेत्रमण्डलम्।
अहं किलोत्थिता भित्त्वा जगतीं नृपतेः सुता॥
(२।११८।२८)

यहां पर भी सीताका पृथ्वी फाड़कर निकलना स्पष्ट ही है।

अयोनिजां हि मां ज्ञात्वा (२।११८।३७)

यहां पर सीताका अयोनिज होना स्पष्ट है।

न केवल पूर्व काण्डोंमें अपितु—सुन्दरकाण्डमें भी यही कहा है।

सुता मैथिलराजस्य सीता भर्तृदृढव्रता।
उत्थिता मेदिनीं भित्त्वा क्षेत्रे हलमुखक्षते (५।१६।१६)

मीमांसकोंने तात्पर्य निर्णयार्थ—

उपक्रमोपसंहारावभ्यासोऽपूर्वता फलम्।
अर्थवादोपपत्ती च लिङ्गं तात्पर्यनिर्णये॥

यह लिङ्ग माने हैं। इनमें अभ्यासका अर्थ है—बार बार कहना। जिस बातमें वास्तविकता होती है, अथवा ग्रन्थकारको जो बात विवक्षित होती है, उसे वह कई बार दोहराता है। सीताका भूमिसे उत्पन्न होना वा अयोनिज होना ग्रन्थकारने कई बार दोहराया है। परन्तु उक्त उपदेशकका कथन ग्रन्थकारने एक बार भी नहीं कहा। इस कारण उक्त उपदेशक का पक्ष निर्मूल ही सिद्ध हुआ।

न केवल पूर्व काण्डोंमें प्रत्युत युद्धकाण्डके ११८।१५ पद्यमें भी यही बात दोहराई गई है। इसी प्रकार उत्तरकाण्डके ६८।७ श्लोकमें भी भगवान् राम ने पृथ्वीको अपनी 'सास' कहा है। 'सास' उसे तभी कहा जासकता है जबकि श्रीरामकी स्त्री सीता पृथिवीकी लड़की हो। यदि सीता किसी मानुषी की लड़की हो; तब 'पृथिवी' रामकी 'सास' कभी भी न कही जासकती। तब वादीकी सब विप्रतिपत्तिएँ निराकृत हो गईं।

पहले हम कह चुके हैं कि—मीमांसकोंने उपक्रम और उपसंहारको भी तात्पर्यनिर्णायक माना है। इसके अनुसार रामायण प्रणेताने उपक्रममें भी सीताका पृथिवीसे आविर्भाव माना है, उपसंहारमें भी उसने सीताका भूतलमें ही तिरोभाव माना है। जैसेकि सीता स्वयं कहती है—

यथाऽहं राघवादन्यं मनसापि न चिन्तये।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति॥ (७।९७।१४)
तथा शपन्त्यां वैदेह्यां प्रादुरासीत्तदद्भुतम्।
भूतलादुत्थितं दिव्यं सिंहासनमनुत्तमम्। (१७)
तस्मिंस्तु धरणी देवी बाहुभ्यां गृह्य मैथिलीम्।
स्वागतेनाऽभिनन्द्यैनामासने चोपवेशयत् (१६)
तामासनगतां दृष्ट्वा प्रविशन्तीं रसातलम्।
पुष्पवृष्टिरविच्छिन्ना दिव्या सीतामवाकिरत्॥(२०)

इन पद्योंमें सीताका पृथिवीमें विलीन होजाना स्पष्ट है।

इस प्रकार उपक्रम एवम् उपसंहारकी एकतासे भी सिद्ध होता है कि— रामायणकारको सीताकी पृथिवीतलसे ही उत्पत्ति अभीष्ट है। पृथिवी पर किसीके द्वारा सीताके गिराये जानेका उल्लेख न तो श्रीवाल्मीकिने किया है, न ही अन्य किसी प्राचीन ने। सीता रावणके घर रहकर भी मन तथा शरीरसे शुद्ध रही। फिर भी रामके द्वारा स्वीकृत कर लिये जानेके कारण उसका प्रबल लोकापवाद हुआ था। तब अज्ञातकुलशीलताकी अवस्थामें अथवा भूमि पर गिराये जानेकी अवस्थामें यदि राम सीताके साथ विवाह करते तो इस अवसर पर भी लोकापवाद अनिवार्य था। लोकापवाद-भीरू राम वैसा विवाह कभी न करते। परन्तु रामायणमें उस अपवादका संकेत भी कहीं नहीं। तब वादीका पक्ष निर्मूल है।

यह बात भी विचारयोग्य है कि—यदि सीता किसी मनुष्यसे उत्पन्न होती तो मैथुनयोनि होनेसे वह छठे ही वर्षमें विवाहयोग्य न होती; परन्तु रामायणकारने छठे ही वर्षमें उसका विवाह लिखा है [इसे हम फिर कभी लिखेंगे] तब स्पष्ट है कि—वह भूमिसे उत्पन्न हुई थी। इसलिये अमैथुनयोनि थी। मैथुनयोनि और अमैथुनयोनिका उत्पत्तिके समयमें बढ़नेका, तथा डीलडौलका समानक्रम नहीं होता। स्त्रीके गर्भाशयमें परिमितता होती है, उसमें ऊष्मा भी सीमित होती है। परन्तु पृथिवीमें अपरिमितता होती है, और ऊष्माकी बहुतायत होती है। इसीलिये तो पूर्वोक्त श्लोकोंमें सीताकी भूतलसे उत्पत्ति होते ही विशिष्ट वृद्धि कही गई है।

जब सृष्टिके नियमसे विलक्षण उत्पत्ति हुआ करती है तब उसमें सृष्टिनियम सीमित वृद्धिक्रम भी नहीं हुआ करता; किन्तु उसमें विलक्षण ही क्रम रहा करता है। इस विषयमें जरायुजसे विलक्षण उद्भिज्ज सृष्टिका वृद्धिक्रम विचारने पर हमारी बात समझा देगा। इस विषयमें आर्यसमाजके प्रवर्तक स्वामी दयानन्दका प्रमाण देना भी उपयुक्त होगा। वे सत्यार्थप्रकाशके आठवें समुल्लासके १३८ पृष्ठमें लिखते हैं—'आदि सृष्टि मैथुनी नहीं होती'। १३६ पृष्ठमें यह लिखते हैं कि—'आदिमें अनेक······· मनुष्य उत्पन्न हुए·······युवावस्थामें'।

इससे सिद्ध हुआ कि—अमैथुन सृष्टि उत्पत्तिके समय में ही डीलडौल वाली अथवा यौवनवाली होती हैं। तभी तो सीता छठे वर्षमें विवाहयोग्य मानी गई। उस कालके बीतने पर—

पतिसंयोगसुलभं वयो दृष्ट्वा तु मे पिता।
चिन्तामभ्यगमद् दीनो वित्तनाशादिवाधतः (२।११८।३४)

उसके पिताकी इस श्लोकमें कही हुई चिन्ता सङ्गत ही है। इससे सीता अमैथुनयोनि है—यह सिद्ध हो गया। नहीं तो छठे वर्षमें ही वह युवति कैसे हो जाती।

अमैथुनयोनिके जन्मसे ही युवति होनेका एक और प्रमाण लीजिये। महाभारतके वनपर्वमें द्रौपदी की उत्पत्ति विषयमें लिखा है—

द्रुपदस्य सुता ह्येषा वेदिमध्यात् समुत्थिता।
अयोनिजा महाभागा स्नुषा पाण्डोर्महात्मनः।
(२७३।५)

यहां पर द्रौपदीको यज्ञकुण्डसे उत्पन्न एवं अयोनिज (अमैथुनयोनि) माना गया है।

कुमारी चापि पाञ्चाली वेदीमध्यात् समुत्थिता।
श्यामा पद्मपलाशाक्षी·······चारुपीनपयोधरा।
(आदिपर्व० १६६।४४-४५)

यहां पर उस द्रौपदीकी उत्पत्ति पयोधरसहित मानी गई है, अर्थात् उत्पत्ति कालमें ही अमैथुनयोनि द्रौपदीको युवति माना गया है। इसी प्रकार स्वा० दयानन्दने भी अमैथुनयोनिको उत्पत्तिके समय से ही यौवनयुक्त माना है—यह हम पहले लिख ही चुके हैं।

फलतः सीता यदि मैथुनयोनि होती, किसी मनुष्यसे ही पृथिवी पर गिराई गई होती; तब छठे ही वर्षमें वह युवति न हो जाती, मानुष सृष्टिक्रमानुसार ११-१२ वर्षसे आगे ही उसका यौवन फूटता है। पर जब उसका छठे ही वर्षमें यौवन दिखलाया गया है; तब यह स्पष्ट है कि—वह भूतल से निकली थी—और अमैथुनयोनि एवं अमानुषी थी, किसी मनुष्यने उसे नहीं गिराया। किसी मनुष्य ने उसे गिराया था—इसमें न श्रीबाल्मीकिकी सम्मति है, न ही किसी और प्राचीनकी। तब यह उक्त उपदेशककी निज कपोलकल्पना ही सिद्ध हुई, और पूर्व मीमांसासे वह निराकृत हो गई।

अब केवल एक ही प्रश्न रहता है कि—पृथिवीसे उत्पत्ति कैसे हो सकती है? इसमें यह जानना चाहिये कि—जहां पर कर्मवश पांच भूतोंका विशिष्ट मिश्रण होजाए; वहीं उत्पत्ति हो जाया करती है। स्त्रीको जो गर्भ हो जाया करता है; उसमें भी कर्मवश शुक्रशोणितमें पांच भूतोंका विशिष्ट संमिश्रण तथा उसमें आत्मसम्पर्क हो जाता है। विशिष्ट मिश्रण न होने पर उसे भी गर्भ नहीं होता। इस प्रकार सिद्ध हुआ कि—जहां जहां वह मिश्रण विशेष हो जाता है, वहां वहां उत्पत्ति भी हो जाया करती हैं। इसमें

वैज्ञानिकोंकी भी सम्मति है। वे पांच भूतोंके मिश्रण विशेष हो जाने पर स्वयं ही वहां पर चैतन्य प्राप्त होजाना मानते हैं।

यद्यपि पांच भूतोंका मिश्रण-विशेष स्त्री गर्भमें ही होता है, तथापि अपवाद न्यायसे अन्यत्र भी कहीं कदाचित् होजाया करता है। तभी वैशेषिक-दर्शनके "शरीरं द्विविधं योनिजमयोनिजं च" (४।२।५) इस सूत्रमें अयोनिज शरीर भी माना गया है। स्वामी दयानन्दके भी मान्य प्रशस्तपाद-भाष्यमें "तत्र अयोनिजम् अनपेक्ष्य शुक्रशोणितं देवर्षीणां शरीरं धर्मविशेषसहितेभ्योऽणुभ्यो जायते" पृथिवीनिरूपणके इस स्थलमें भी देव वा ऋषियोंका धार्मिक परमाणुओंसे उत्पन्न होना माना गया है। सीता भी मानुषी नहीं थी, किन्तु दैवी थी, अतः उसका अयोनिजत्व उक्त सूत्रसे सिद्ध हो ही गया।

इसी प्रकार वैशेषिकदर्शनमें एक अन्य सूत्र भी है—'धर्मविशेषाच्च' (४।२।७) इसका यही आशय है कि अदृष्टवत् आत्मसंयोगसे ही परमाणुओंमें चेष्टा होती है। उसी चेष्टासे वे मिलकर द्व्यणुकादिक्रमसे अयोनिज देव वा ऋषियोंके शरीरोंको बना देते हैं। इस विषयके उक्त दर्शनमें अन्य भी सूत्र हैं; परन्तु विस्तार भयसे उनका उल्लेख नहीं किया गया।

फलतः अमानुषी देवी सीताकी भूतलसे उत्पत्ति संगत ही है। तब फिर श्रीदलपति शास्त्री नामक उपदेशककी कल्पना निर्मूल ही हुई। उसी देवयोनिग सीताकी जयन्ती ही नियत दिनमें अभीष्ट है; जिसका निर्वाचन 'श्रीस्वाध्याय-सम्पादक' महोदयने किया है।

दीप-शिखा

कवयिता :—
श्री पं० परमानन्दजी
विद्यालङ्कार

प्रबल पवनसे व्याकुल होकर
कांप रही थी दीप-शिखा।
उसे दीखता था अब बीता
जितना मेरा समय लिखा॥

किसी आड़को ढूंढ रही थी
अपना तन दुबकाने को।
न थी सहारा कोई पाती
अपनी जान बचाने को॥

जिस कागजको भस्म किया था
उसने अपने यौवनमें।
जिसके भाई-बन्धुको समझा
भोजन-सम था निज मनमें॥

उसको सम्मुख देख उसीके
आगे करुण पसारा हाथ।
'क्या मुझको तुम शरण न दोगे?'
यह बोली आंसूके साथ॥

कागज हँस करके तब कहता
'नहीं हमारा तुमसे मेल।
काम निकल जाने पर हमको
खाना हुआ तुम्हारा खेल॥

आज कष्टमें पड़ करके तुम
हमको कहने लगे सहाय।
मित्र मान कर तुमको रहना
हमको कभी नहीं पौसाय॥'

गिड़गिड़ाय कर दीप-शिखाने
कहा मुझे यह भिक्षा दो।
मित्र बनाओ जगमें सबको
मुझे देख यह शिक्षा लो॥

छोटे-बड़े सभी हित-चिन्तक
कष्ट पड़े पर आते काम।
तुच्छ किसीको नहीं समझना
दुर्बल हो या बलका धाम॥'

इतनेमें झोंकेने आकर
दीप-शिखाका किया विनाश।
कागजने झोंकेसे पूछा
'क्यों दीनोंका करते नाश?

पावकके तुम मित्र कहाते
फिर क्यों ज्वालासे है द्वेष?'
अट्टहास कर कहा वायुने
'हरे दीनके मैंने क्लेश॥'

बल-हीनोंका जन्म वृथा है, अपनेको वह लगता भार।
जीना चाहो शक्ति बढ़ाओ, शक्ति-युक्तका है संसार॥

बृहस्पति और ममता

[लेखक— महामहोपदेशक शास्त्रार्थमहारथी श्री पं० माधवाचार्यजी शास्त्री]

पुराणों पर एक यह भी आक्षेप किया जाता है कि उनमें बृहस्पतिका ममतासे बलात्कार करना लिखा है। कहा जाता है कि बृहस्पतिने अपने बड़े भाई उतथ्यकी धर्मपत्नी ममतासे सगर्भावस्थामें ही बार बार हटाने पर भी हठात् मैथुन किया, जब गर्भस्थ बालकने बृहस्पतिका वीर्य अन्दर न जाने दिया तो उसके बाहिर गिरते ही उससे 'भरद्वाज' मुनिकी उत्पत्ति हुई; एवं बृहस्पतिने क्रुद्ध होकर गर्भस्थ बालकको जन्मान्ध हो जानेका शाप दिया, जिससे दीर्घतमा ऋषि उत्पन्न हुए। यह कथा अत्यन्त अश्लील, धर्म विरुद्ध, एवं असम्भव है। हम क्रमागत शैलीके अनुसार इस पर भी विचार करते हैं।

वैदिक-स्वरूप

(क) यदस्यै वाचो बृहत्यै पतिस्तस्माद् बृहस्पतिः।

(जैमिनि उपनिषद् २।२।५)

(ख) बृहस्पतिरिव बुद्ध्या।

(मन्त्र ब्राह्मण २।४।१४)

(ग) द्वितीयां जायामश्नुते।

(तैत्तिरीय १।३।१०।३)

(घ) तामन्तर्हिताꣳरेतः सिच्यामुपदधाति।

(शतपथ ७।४२।२४)

(ङ) यद् वै रेतसो योनिमतिरिच्यतेऽमुया तद् भवति।

(शतपथ ६।३।३।२६)

(च) भारद्वाजं वै बृहत्।

(ऐतरेय ८।३)

(छ) दीर्घतमा मामतेयो जुजुर्वान् दशमे युगे।

(ऋग्वेद अष्टक २ अनु० ३ व० १)

अर्थात्— (क) इस श्रेष्ठ वाणीके पतिको बृहस्पति कहते हैं (ख) बृहस्पतिकी भांति बुद्धिसे [संगत होता है] (ग) दूसरी स्त्रीको प्राप्त होता है (घ) उस अन्तर्हिता=सगर्भा [ममता] को वीर्य सेचनके लिये उपधान करता है (ङ) जो वीर्य योनिसे अतिरिक्त= बाहिर पड़ता है वह उस [सगर्भा ममता] के कारण होता है। (च) बृहत् ही भारद्वाज है (छ) दशमयुग= सृष्टिके आरम्भसे दो चतुर्युगी व्यतीत होकर आने वाले त्रेतामें—ममताका बेटा, दीर्घतमा नामक ऋषि मन्त्रद्रष्टा हुआ।

पौराणिक-स्वरूप

अन्तर्वत्न्यां भ्रातृपत्न्यां मैथुनाय बृहस्पतिः।
प्रवृत्तो वारितो गर्भं शप्त्वा वीर्यमवासृजत् ॥ ३६ ॥
तं त्यक्तुकामां ममतां भर्तृत्यागविशङ्किताम्।
नामनिर्वचनं तस्य श्लोकमेनं सुरा जगुः ॥ ३७ ॥
मूढे ! भरद्वाजमिमं भरद्वाजं बृहस्पते !
या तौ यदुक्त्वा पितरौ भरद्वाजस्ततस्त्वयम् ॥ ३८ ॥
चोद्यमाना सुरैरेवं मत्वा वितथमात्मजम्।
व्यसृजन्मरुतोऽबिभ्रन्दत्तोऽयं वितथेऽन्वये ॥ ३९ ॥

(श्रीमद्भागवत ९ । २०)

अर्थात् गर्भवती भाईकी स्त्रीके साथ बृहस्पति मैथुन करनेके लिये प्रवृत्त हुआ (गर्भस्थ बालकने) निषेध किया (अतः उसको अन्ध हो जानेका) शाप देकर (बाहिर ही) वीर्य छोड़ दिया ॥३६॥ पतिके त्याग देनेके भयसे ममताने उस (प्रस्खलित वीर्य द्वारा उत्पन्न हुए बालक) को छोड़ना चाहा, तब देवताओंने ममताके प्रति उस (सद्योजात शिशु) के नामका निर्वचन भूत यह श्लोक पढ़ा ॥३७॥ हे मूर्खे। दोसे उत्पन्न होने वाले इस बालकका तू पालन कर। हे बृहस्पते ! तू भी इस 'द्वाज'=दूसरेके क्षेत्राश्रयसे अन्य वीर्यजात-बालकका पोषण कर। इस प्रकार परस्पर कहते हुए ममता और बृहस्पति दोनों ही उस बालकको छोड़ कर खिसक गए, इस लिए इसका नाम 'भरद्वाज' ऐसा प्रसिद्ध हुआ ॥३८॥ देवताओंके कहने पर भी ममताने इस बालकको वितथ=व्यर्थप्रायः=

अनावश्यक=निरर्थक एवं व्यभिचार-जात जान कर छोड़ दिया, (तब इस अनाथको) मरुत् नामक देवताओंने प्राप्त करके भरतके वंशमें दे दिया ॥३६॥

वास्तविक भाव

उपर्युक्त दोनों स्वरूपोंकी तुलना करने पर प्रत्येक साक्षर इस आख्यानकी वैदिकताका भली भांति अनुमान कर सकता है। कई क्षुद्रबुद्धि जन इस कथासे नियोग भी सिद्ध करना चाहा करते हैं, परन्तु उन्हें यह विदित नहीं कि इससे तो उनके माने हुए नियोगकी उल्टी धज्जियां उड़ जाती हैं। क्योंकि उन के यहाँ नियोगका लक्षण यही तो है कि 'सन्तानके लिये पतिकी आज्ञासे या उसके मरने पर किसी पर पुरुषसे इच्छापूर्वक भोग करना' उक्त कथामें इन तीनों बातोंका सर्वथा अभाव है। क्योंकि सन्तान तो पूर्व ही ममताके गर्भमें विद्यमान थी। पति-आज्ञाका इसमें लेशमात्र भी नहीं और ममता अन्त तक इस कार्यके सर्वथा प्रतिकूल ही रही है। अतः इसे खुला व्यभिचार या बलात्कार ही कह सकते हैं। यदि उनकी सम्मतिमें नियोग भी इसीका नाम है तब तो उनके इस धार्मिक कृत्यपर सौ २ बार बलिहारी! आशा है कि प्रतिवादी अब इससे नियोग सिद्ध करनेका साहस नहीं दिखायेंगे। रहा इसकी वास्तविकताका विचार, सो हम वैदिक शब्दोंमें ही प्रकट करते हैं। वेदोंमें लिखा है कि—

बाग्वै बृहती। (शतपथ १४।४।१।२२)

अर्थात्—यह वाक् ही बृहत् कही जाती है।

पतिः पालयिता (निरुक्त अ० १० खं० २१)

अर्थात्—पति रक्षकको कहते हैं। सो पुरुषका मन ही बृहस्पति कहलाता है, क्योंकि 'यन्मनसाऽनुमनुते तद् वाचा वदति' इस श्रुतिके अनुसार पहिले मनमें जो भाव उदित होता है वही पश्चात् वाणीसे बोला जाता है अतः मन ही वाणीका पति कहला सकता है, इसका ज्येष्ठ भ्राता जीवात्मा ही उतथ्य है, 'तथ्य' शब्दका अर्थ सत्य है और 'उ' शब्द वितर्कद्योतक है। अर्थात् जिसकी सत्यतामें वितर्क हो वह 'उतथ्य' कहा जाता है। अतः यह जीव जीव रूपेण सत्य है किं वा "ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" के अनुसार ब्रह्मरूपेण सत्य है? ऐसा विचार जीवात्माके विषयमें निरन्तर बना रहता है। द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, आदि सिद्धान्त इसी एक 'उ' की करामात है। 'ममता' शब्दकी विशेष व्याख्या करनेकी आवश्यकता नहीं, क्योंकि प्रचलित भाषामें भी किसी वस्तुमें विशेष आसक्त होना या उसमें रागाधिक्य रखना ममत्व=ममता किंवा मामता कही जाती है, जो कि मायाका ही विशद स्वरूप है। 'दीर्घतमा' का अर्थ घोर अन्धकार है, जिसे दूसरे शब्दोंमें अज्ञान या मोह कहा जा सकता है। इसी प्रकार 'वीर्य' शब्द भी पराक्रमका पर्याय है। अतः आध्यात्मिक पक्षमें इसका सीधा अर्थ यही होगा कि जीवात्मा रूप तथ्यकी स्त्री ममता-ममत्वयुक्त, तादृश वृत्तिके गर्भमें मोह रूप दीर्घतमा थे। बृहस्पति रूप मनने इस वृत्तिमें अपने वीर्य (सामर्थ्य) का संचार करना चाहा परन्तु जब तक ममताके गर्भमें मोह घुसा बैठा हो तब तक मानसी शक्तिका संचार होना सर्वथा कठिन है। वेदमें इसी भावको इस प्रकार प्रकट किया है—

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।

(यजुः ४०। १२)

अर्थात्—जो मनुष्य अविद्याके चंगुलमें फंस जाते हैं वह घोर अन्धकारको प्राप्त होते हैं। अतः मनके सहस्र बार प्रयत्न करने पर भी ममतागर्भस्थ मोह मानसिक बलका प्रवेश नहीं होने देता। कदाचित् वह मन रूप बृहस्पति यथा तथा अपने वीर्य-(सामर्थ्य) को ममतावृत्तिके सन्निधानमें भी प्रस्खलित करदे—फैलादे, तो उससे आत्मज्ञान रूप 'भरद्वाज' उत्पन्न होता है। क्योंकि 'आत्मज्ञान' मन और वृत्ति इन दोनोंके पारस्परिक सङ्घर्षका परिणाम है। अतः यह 'द्वाज' कहा जाता है। उत्पन्न हुए आत्मज्ञानका यमनियमादि-साधनों द्वारा ही परिपोषण होता है, अतः यही भरद्वाजका देवताओं द्वारा रक्षित होनेका अभिप्राय है, यही इस कथाका आध्यात्मिक भाव है।

भारतीय ज्यौतिष प्रणाली

[लेखक—ज्योतिर्विद्यारत्न श्री पं० कृष्णचन्द्रजी ओझा केतकी पञ्चाङ्गकर्ता]

धर्मशास्त्रीय सभी विषयोंका निर्णय भारतीय शास्त्र पद्धतिके अनुसार यदि देखा जाय तो वह केवल ज्योतिषशास्त्र से ही निश्चित होता है। इसका कुछ विवरण गताङ्कमें आ चुका है। ज्योतिष-शास्त्रकी रचना आकाशीय ग्रह ताराओंकी स्थिति पर ही निर्भर है। यह शास्त्र कालज्ञानका साधन होनेसे हमारे आर्य ज्योतिर्वेत्ताओंने ग्रह ताराओंकी स्थितिका ज्ञान अति उन्नतम कर रक्खा है इसमें कोई सन्देह नहीं। कालान्तरमें ग्रन्थोक्त गणितमें अन्तर हुआ ही करता है यह गणेशदैवज्ञका कथन गताङ्कमें आचुका है, तथापि कुछ विस्तृत विचार इसपर करना आवश्यक है। अब हमें यह देखना चाहिये कि ग्रहलाघव किस भूमिकाको लेकर निर्माण किया गया

श्रीकेशवः स्फुटतरं कृतवान्हि सौरा-
यांसन्नगो तदपि षाष्ठिमिते गताब्दे।
दृष्ट्वा श्लथं किमपि तत्तनयो गणेशः
स्पष्टं यथा ह्यकृत दृग्गणितैक्ययत्र ॥
कथमपि यदिदं चेद्भूरिकाले श्लथंस्या-
न्मुहुरपि परिलक्ष्येन्दुग्रहादृक्षयोगात्।
सदमलगुरुतुल्यप्राप्तबोधःप्रकाशः
कथित सदुपपत्या शुद्धिकेन्द्रे प्रचाल्ये ॥ (ग्र. ला.)

उक्त वचनमें गणेश दैवज्ञने स्पष्ट कह दिया है कि मेरे पिताने गणित स्थूल हुई देखकर स्पष्ट बनाई, परंतु मैंने उसमें (पिताजीकी गणितमें) ६० साठ ही वर्षमें अन्तर देखा, इसलिये अन्तरको निकालकर मैं इस ग्रन्थकी रचना करता हूँ। अब यहाँ यह देखना चाहिये कि ग्रन्थकारने आगामी विद्वानोंको संशोधन की आज्ञा दे रखी है या नहीं, उपरोक्त दूसरे श्लोकमें स्पष्ट कह दिया है कि मैंने ग्रहगणित शुद्धकी है किन्तु कुछ कालान्तरसे इसमें भी अन्तर होगा सो आगामी भावी पीढ़ीके विद्वान् बन्धु उसको शुद्ध करलें।

हमारे भारतीय विद्वानोंमें हठ दुराग्रह या पक्षपात किञ्चिन्मात्र भी नहीं था, गणेश दैवज्ञ अपने पिताके ग्रन्थमें अन्तर बताकर "उसको मैंने शुद्ध किया" ऐसा जो कहते हैं यह कितना स्पष्ट और परम्परा प्रणालीके अनुसार है। उपर्युक्त श्लोकोंसे पहले "ब्रह्माचार्यवसिष्ठादि" श्लोकोंमें भी यही प्रणाली सिद्ध की है और उसी प्रणालीके अनुसार ग्रहलाघव निर्माण किया गया है यह स्पष्ट है। आगे गणेश दैवज्ञने कौनसा ग्रह कितने अन्तरसे किस सिद्धान्तका लेनेसे दृक्तुल्य मिलता है यह कहा है, यथा—

सौरोऽर्कोऽपि विधूच्चमङ्ककलिको नाब्जो गुरुस्त्वार्यजो-
ऽसृग्राहू च कज ज्ञकेन्द्रकमथार्ये सेषुभागः शनिः।
शौक्रं केन्द्रमजार्यमध्यगमिति मे यान्ति दृक्तुल्यतां
सिद्धैस्तैरिह पर्वधर्मनयसत्कार्यादिकं त्वादिशेत् ॥
(ग्र. ला.)

भावार्थ—इस श्लोकमें भी गणेश दैवज्ञ कहते हैं कि सूर्यसिद्धान्तका सूर्य और चन्द्रोच्च ठीक हैं, नौ कलासे न्यून चन्द्र सूर्यसिद्धान्तसे, पांच अंशसे अधिक शनि आर्यसिद्धान्तसे, शुक्रकेन्द्र यह ब्रह्मसिद्धान्त और आर्यसिद्धान्त इनके मध्य-प्रमाणसे लेनेसे ग्रह दृक्तुल्यताको प्राप्त होते हैं, ऐसी गणितसे ग्रहणादि पर्व व्रतादि धर्मकार्य विवाहादि मंगल कार्य इत्यादि करने चाहियें।

इसके अनुसार गणेश दैवज्ञ तथा उनके पिता केशव दैवज्ञ शुद्ध सूक्ष्म दृक् तुल्य गणितके ही स्वाभिमानी थे, यह स्वयं सिद्ध बात है। अब गणेश दैवज्ञ ने सिद्धान्तकारोंका उल्लेख करके कहा है कि— "जैसे २ प्राचीन सिद्धान्तोंकी गणित स्थूलप्राय होने लगी वैसे २ उनके आगेके विद्वानोंने उसे शुद्ध किया है।" क्या गणेश दैवज्ञकी यह बात वास्तवमें ?सत्य है इसे देखना चाहिए। आज सूर्यसिद्धान्त

दो हैं, आद्यसूर्यसिद्धान्त और द्वितीय सूर्यसिद्धान्त। दोनों का आशय निम्न है—

शास्त्रमाद्यं तदेवेदं यत्पूर्वं प्राह भास्करः।
युगानां परिवर्तेन कालभेदोऽत्र केवलः ॥ (सू. सि.)

शास्त्र वही पूर्वका है जोकि सूर्यने कहा है, परन्तु युगमानके परिवर्तनसे केवल जहाँ काल भेद हुआ वहाँ गणितमें भेद पड़ना स्वाभाविक बात है। इसीलिए सूर्यसिद्धान्तमें ही आगे कहा है—

तत्तद्गतिवशान्नित्यं यथा दृक्तुल्यतां ग्रहाः।
प्रयान्ति तत्प्रवक्ष्यामि स्फुटीकरणमादरात् ॥ (सू. सि.)

जिस २ गति द्वारा चलने वाले ग्रह जिस गणितसे दृक्तुल्यताको प्राप्त हों ऐसी स्पष्ट करनेकी रीतिको आदरसे कहता हूं।

इसपरसे दृक्तुल्य आवे ऐसा स्पष्टीकरण श्रीसूर्यको मान्य था इसमें सन्देह नहीं। इसीलिए कालान्तरसे होने वाले अन्तरको लक्ष्यमें रखकर ही सूर्यसिद्धान्तमें बीजोपनयनाध्याय दिया है और बीज संस्कारको प्रतिपादित किया है। यथा—

चक्रानुपातजो मध्यो मध्यवृत्तांशजः स्फुटः।
कालेन दृक्समो न स्यात्ततो बीजक्रियोच्यते ॥ (सू.सि.)
बीजंनिःशेषसिद्धान्त रहस्यंपरमं स्फुटम्।
यात्रापाणिग्रहादीनां कार्याणां शुभसिद्धिदम् ॥ (सू.सि.)

उपरोक्त श्लोकोंमें तथा और भी उस अध्यायमें सूर्यांश पुरुष मयासुरको कहते हैं कि तेरी प्रीतिके लिए मैंने यह बीज तेरेको कहा है, इसे गुप्त रखना अगड़ं-बगड़ं कहीं नहीं कह देना। शिष्यकी परीक्षा करके यदि वह शिष्य गुरुभक्त हो सुशील हो उसीको कहना और वह ब्राह्मण हो, दूसरेको नहीं देना, सम्पूर्ण सिद्धान्तोंका यह रहस्य है, इस बीजका संस्कार देनेसे ग्रह दृक्तुल्यताको प्राप्त होते हैं और यह बीज देकर आये हुए ग्रहोंसे यात्रा विवाह आदि शुभ कार्य करने चाहियें जिससे वह सिद्धिको प्राप्त होवें। सूर्यांशपुरुषका आदेश है कि दृक्तुल्य गणित ही धार्मिक क्रियाओंके लिए ग्राह्य है, ऐसा उपरोक्त उनके वचनोंसे सिद्ध होता है।

ऐसे ही ब्रह्मगुप्तने भी अपने बताए ब्रह्मगुप्तसिद्धान्तमें कहा है। यथा—

ब्रह्मोक्तं ग्रहगणितं महताकालेन यत्खिलीभूतम्।
अभिधीयते स्फुटं तज्जिष्णुसुतब्रह्मगुप्तेन ॥ (ब्र.गु.सि.)

ब्रह्माकी कही हुई गणित अधिक समय बीत जाने पर स्थूल होगई है, उसको जिष्णुके पुत्र ब्रह्मगुप्तने सुधारकर स्पष्ट किया है। ब्रह्मगुप्त भिन्नमाल (श्रीमाल) में शक ५०५ के मध्यमें हुआ है।

इत्थं मांडव्य ! संक्षेपादुक्तं शास्त्रं मयोदितम्।
विस्रस्ती रविचन्द्राद्यै र्भविष्यति युगे युगे ॥ (वशिष्ठसि.)

भावार्थ—हे मांडव्य ! सूर्यांश पुरुषने मयासुर को कहा हुआ यह शास्त्र संक्षेपमें कहा है, सूर्य चन्द्र आदिसे युगयुगमें विस्रस्ती (शिथिलता) होगी।

तात्पर्य यह है कि सूर्य चन्द्र आदि ग्रहोंके कारण इस शास्त्रकी युग युगमें शिथिलता होगी। अर्थात् इस शास्त्रमें कहे हुए भगणोंसे आए हुए ग्रह कालान्तरमें दृक्तुल्यताको प्राप्त नहीं होंगे। इसलिए वह अन्तर वेध द्वारा जानकर उसका संस्कार ग्रहोंमें करनेसे ग्रह दृक्तुल्यताको प्राप्त होंगे। इसी वचनानुसार ब्रह्मगुप्त आदि विद्वानोंने अपने २ समयमें अन्तरको वेधोंसे जानकर मुनिप्रणीत ग्रहोंमें उसका संस्कार कर अपने २ ग्रन्थ बनाये हैं। ब्रह्मगुप्त-सिद्धान्तमें और भी कहा है कि—

संसाध्य स्पष्टतरं बीजं नलिकादियन्त्रेभ्यः।
तत्संस्कृतग्रहेभ्यः कर्तव्यौ निर्णयादेशौ ॥ (ब्र. गु. सि.)

नलिकादि यन्त्रों द्वारा बीजको सिद्ध करके और वह बीज-संस्कृत ग्रहोंसे धर्मनिर्णय और आदेश करना चाहिए, ऐसा ब्रह्मगुप्तने स्पष्ट कहा है—

यान्ति संसाधिताः खेटाः येन दृग्गणितैक्यताम्।
तेन पक्षेण ते कार्याः स्फुटास्तत्समयोद्भवाः ॥
(दामोदर पद्धति)

जिस पद्धति द्वारा ग्रह साधन करके दृक्तुल्यता आती हो ऐसे पक्षसे मनुष्योंने अपने धार्मिक, जातकादि कार्य करने चाहिए।

यात्राविवाहोत्सवजातकादौ खेटैः स्फुटैरेव फलस्फुटत्वम् ।
स्यात्प्रोच्यते तेन नभश्चराणां स्फुटक्रिया दृग्गणितैक्यकृद्या ॥
(सिद्धान्त शिरोमणि)

भास्कराचार्य अपने सिद्धान्तशिरोमणिमें कहते हैं कि—यात्रा विवाह आदि धार्मिक विधियोंके लिए जब ग्रह दृक्तुल्य स्पष्ट लेंगे तब ही फल उसका स्पष्ट होगा। वह ग्रह कैसे हों कि आकाशमें दृक्तुल्यता को प्राप्त होते हों।

"यदा पुनर्महता कालेन महदन्तरं भविष्यति तदा महामतिमन्तो ब्रह्मगुप्तादीनां समानधर्माण एव-उत्पत्स्यन्ते। ते तदुपलब्ध्यनुसारिणीं गतिमुररीकृत्य शास्त्राणि करिष्यन्ति। अत एवायं गणितस्कन्धो महामतिमद्भिर्धृतः सन्ननाद्यनन्तेऽपिकाले ऽखिलत्वं न यातीत्युक्तम्।"

भावार्थ—जिस समय अधिक समय व्यतीत होने पर अधिक अन्तर हो उस समय महान् बुद्धिमान् गणक ब्रह्मगुप्तकी भांति प्रत्यक्ष वेधोंद्वारा गतियोंको स्वीकार कर ज्योतिषशास्त्रका जीर्णोद्धार करेंगे। इसी प्रणालीके अनुसार जातकसारमें भी लिखा है—

जातकादिषु सर्वत्र ग्रहैर्ज्ञानं प्रजायते ।
तस्माद् गणितवद्दृक्तुल्यात्स्वतन्त्रात्साधयेद्ग्रहान् ॥

भावार्थ—जातक आदि सर्वत्र ग्रहोंके ज्ञानार्थ जिस गणितसे ग्रह दृक् तुल्य होता है उससे स्वतन्त्र ग्रह साधन करने चाहियें।

यस्मिन्पक्षे यत्रकाले येन दृग्गणितैक्यकम्।
दृश्यते तेन पक्षेण कुर्यात्तिथ्यादिनिर्णयम् ॥ (वसिष्ठ)
ध्यानग्रहोपदेशाद्बीजं ज्ञात्वा च दैवज्ञैः।
तत्संस्कृतग्रहेभ्यः कर्तव्यौ निर्णयादेशौ ॥

भावार्थ—जिस पक्षसे जिस कालमें दृक्तुल्य गणित जिसकी हो उसी पक्षसे तिथ्यादिका निर्णय करना चाहिये तथा बीज देनेकी आवश्यकता जान पड़ने पर बुद्धिमानोंने वह बीजका संस्कार ग्रहोंमें देकर धार्मिक कार्योंका निर्णय करना चाहिये ऐसा वसिष्ठजीका वाक्य है। यह शास्त्र प्रत्यक्ष शास्त्र है, यदि यही (ज्योतिषशास्त्र) प्रत्यक्ष स्थितिको नहीं बतलावे तो यह शास्त्रही क्या, यथा—

किं तेनापि सुवर्णेन कर्णघातं करोति यः।
तथा किं तेन शास्त्रेण यत्रप्रत्यक्षतः स्फुटम् ॥

भावार्थ—ऐसा सुवर्ण किस कामका जोकि कान को छेद देता हो और ऐसा ज्योतिषशास्त्र ही किस कामका जिसकी गणित प्रत्यक्ष दिखाई नहीं दे।

यन्त्रैः स्पष्टतरोऽत्र जन्मसमयो वेद्योऽथ खेटाः स्फुटाः।
यत्पक्षे हि घटन्त उद्गम इहास्तर्क्षं सषड्भः स च ॥
(केशवीय जातक पद्धति)

जिस पक्षसे गणित करनेसे ग्रह दृक्तुल्यताको प्राप्त होते हों अर्थात् जन्म समयके ग्रह ऐसे स्पष्ट हों कि वह यन्त्रों द्वारा वेधसे स्पष्ट प्रतीत होते हों ऐसे ग्रह स्पष्ट करके पुनः आगे जन्मपत्रकी गणित करनी चाहिये ऐसा केशवीकारका स्पष्टमत है।

ऐसे आज भारतीय ज्यौतिषशास्त्रमें अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं और भारतीय ज्योतिषशास्त्र वेत्ताओंकी मत प्रणाली ऐसी ही पाई जाती है। इसी कारणसे भारतका ज्यौतिषशास्त्र आज इतनी उच्च स्थितिमें पहुँचा हुआ पाया जाता है। बांसकी नलियोंसे वेध लेकर हमारे भारतीय विद्वानोंने ऐसे दृक्तुल्य गणितका साधन किया है कि जहां अति-सूक्ष्म यन्त्रों द्वारा वेध लिये जाते हैं ऐसे ग्रिनिच आब्झरवेट्री (यूरुपकी प्रसिद्ध विशाल वेधशाला) के सञ्चालकोंने भारतीय विद्वानोंके लिये मुंहमें उङ्गली दे आश्चर्य प्रकट किया है। वहां उनके वेधोंके तत्तुल्य हमारे भारतीय ज्यौतिषशास्त्रके अनुसार गणित प्राप्त होता है। यदि भारतीय प्राचीन विद्वानों में हठ या दुराग्रह होता तो आज भारतीय ज्यौतिष शास्त्र इतनी उज्ज्वल कीर्तिको प्राप्त नहीं होता। इसका आधुनिक विद्वानोंको ध्यान रखना चाहिये। धीरे २ वेधप्रणाली लुप्त प्राय होनेसे आधुनिक भारतीय विद्वानोंको दृक्तुल्य या वेधतुल्य आदि शब्द-योजना चमत्कारिक प्रतीत होती है। परन्तु पहले घर २ में

यन्त्र थे, प्रत्येक ज्यौतिषी अपने यहां नतांश, उन्नतांश, दिक्साधन, ग्रह ताराओंके वेध नलिका बन्धनसे किया करते थे और अभी तक उनके घरोंमें ऐसे यन्त्र पाये जाते हैं। अब भी यन्त्रराज जैसा छोटा सा यन्त्र पास रखकर नतांश, उन्नतांश, ग्रह-भोग, ताराओंके भोग, समय, लग्न, दशम, क्रान्ति आदि साधन कर सकते हैं और पञ्चांगमें दी हुई गणित की परीक्षा भी कर सकते हैं। रविचन्द्रमें १२ अंश का अन्तर होनेसे १ तिथि होती है, विशेषतया यही प्रमाण तिथि विषयमें विद्वानोंने माना है। तिथि भी आप आकाशीय वेधोंसे निश्चित कर सकते हैं। जिसके लिये "षष्ट्यंशयन्त्र" अत्यन्त उपयोगी है। "षष्ट्यंश यन्त्र" द्वारा रवि चन्द्रका अन्तर निकालकर स्पष्ट रविचन्द्रकी सूक्ष्म गति लेकर तिथिका मान वेध द्वारा भी निश्चित कर सकते हैं। जिसका विवरण प्रसंगवशात् 'वेध प्रकरण' में किया जायगा। यहां कहनेका तात्पर्य यह है कि ज्यौतिषके प्रत्येक अङ्ग प्रत्यङ्ग आकाशीय घटनाओंसे ओतप्रोत हैं। भारतीय ज्योतिर्वेत्ताओंमें सूक्ष्म दृक्तुल्य गणितका विरोधी केवल शक १५७० में कमलाकरभट्ट हुआ, किन्तु कालान्तर जन्य बीज और अन्तर उनको भी स्वीकार करना ही पड़ा है, यह उन्हींके श्लोकोंसे सिद्ध होता है—

दिग्देशकालैर्बहुधान्तराणि
स्थूलानुपातैर्जनितानि यानि।
मध्यस्फुटीयाम्बरगौलशैघ्र्य-
मान्दोच्चपातादि विचित्रगत्या॥
सुस्थूल या स्युर्गणितोद्भवानि
सर्वाणि तन्मिश्रितमेकमेव।
बह्वन्तरं स्याद् बहुकालजं तत्-
ज्ञानं ह्यशक्यं हि नृणां यतोऽत्र॥
कस्यान्तरं कुत्र च तत्प्रदेयं
न ज्ञायते तन्नलिकोक्तितोऽपि।
लोकेऽभिमानात्कथयन्ति मूढाः
कालान्तरं बीजमहो न सत्तत॥
ब्रह्मार्कचन्द्रैः स्थिरसृष्टिरुक्ता
प्रतिक्षणं तां च विलक्षणां च।
मत्वा स्वबीजस्य गतिं वदन्ति
ज्ञातं च किं तैस्तदहं न वेद्मि॥

भावार्थ— दिशा, देश, काल, स्थूल अनुपात, मन्दोच्च, शीघ्रोच्च आदिकी विचित्र गति इत्यादि कारणोंसे जो २ अन्तर पड़ता है वह सभीका मिश्रित अन्तर एक ही दिखाई देता है, वह अन्तर अधिक समयमें अधिक होगा, परन्तु उसका मनुष्यको ज्ञान होना अशक्य प्राय है, क्योंकि कौनसा अन्तर कहां देना यह नलिकायन्त्रसे भी जान नहीं सकते। लोकोंको अभिमान नहीं, मूढ़लोक "कालान्तर जन्य उत्पन्न हुवा बीज है" ऐसा जो कहते हैं वह बराबर नहीं है। ब्रह्म, सूर्य, चन्द्र इन्होंने सृष्टिको स्थिर कहा है। उसको प्रतिक्षणमें चल मानकर निश्चित किये हुए बीजकी सिद्धता करते हैं, उन्होंने इसमें क्या समझा है यह मैं नहीं जान सकता।"

कमलाकर भट्टका यह कथन भ्रमयुक्त पाया जाता है, क्योंकि पहले बीज होना बताते हैं और कालान्तर जन्य अन्तर बहुत दिनोंसे "एक बड़ा भारी अन्तर हो जायगा कि जिसको कहां और कैसा मिलाना इसका ज्ञान नहीं होगा" आदि, इसमें कमलाकरजी बीजको स्वीकार करते हैं, किन्तु वह बीज कितना और कैसा और कहां मिलाना चाहिए इसका उनको पता नहीं लगनेसे अन्तमें उन्होंने यह कह दिया कि बीज ही नहीं है। परन्तु कमलाकरजी भारी भ्रममें पड़ गए थे यह प्रत्येक विद्वान् कह सकता है, क्योंकि यदि बीजका खण्डन करना था तो बीज होना नहीं बतलाते, जहां बीजका होना बताया है तो वहां बीजका खण्डन कैसे हो सकता है? ऐसे द्विधा कथनसे यही समझना चाहिए कि कमलाकरजी जहां बीजका होना मानते हैं तो बीज संस्कारको भी मानना आवश्यक है। परन्तु किस कालमें कितना बीज देना चाहिए इसका उनको पता नहीं लगनेके कारण बीजका खण्डन कर दिया है। वास्तवमें तो कमलाकरजीकी गणना बीज मानने वालोंमें ही करनी चाहिए, क्योंकि उन्होंने बीजका होना पहले ही

श्लोकमें कह दिया है। अतः मेरा अभिप्राय है कि कमलाकर भट्ट जी बीजसंस्कारको प्रतिपादित करने वाले हैं।

ऊपर दिये हुए भ्रमयुक्त कल्पनाओंसे कमलाकर जी ने और एक बात कह रक्खी है, उसमें भी द्विविध कल्पनाका बीजारोपण किया है—

अदृष्टफलसिद्ध्यर्थं यथार्काद्युक्तितः कुरु ।
गणितं यद्वि दृष्टार्थं तद्दृष्टयुद्भवतः सदा ॥

भावार्थ—इसमें कहते हैं कि अदृष्टफलसिद्धि के लिए जो तिथ्यादि साधन किया जाता है वह सूर्य सिद्धान्तमें कही हुई पद्धतिसे साधन करना, क्योंकि सूर्य, सोम, वशिष्ठ आदि महर्षियोंके सिद्धान्तोंमें बीज संस्कार देनेको नहीं कहा है इसलिए बीज संस्कार है ही नहीं और ग्रहण उदयास्त आदि वेधोंसे प्राप्त हुई गणितसे साधन करना।

यहां कमलाकर भट्टने अदृष्टफलसिद्धिके लिए जो वचन कहा है वह सूर्यसिद्धान्तके माननेके विषयमें कहकर अन्य ग्रहणादि वेधतुल्य गणितसे लेनेको कहते हैं। इसमें भी उनको पिछला भ्रम स्थिर होनेके कारण ही यहां ऐसा द्विविध मत देना पड़ा और यह मत उन्होंने अति शीघ्रतासे दे दिया ज्ञात होता है। क्योंकि ऐसा उल्लेख अन्य किसी भी ग्रन्थमें पाया नहीं जाता और यहां गणित पद्धतिके विरुद्ध मत प्रणाली होनेकी संभावना है, अतः अन्य ग्रंथोंसे यह मत विरुद्ध होनेसे मानने योग्य नहीं।

किसी विद्वानने तो यहांतक कह दिया कि "पांच ग्रह जब इकट्ठे होते हैं तब ग्रहण होता है" यह कहना जैसा शास्त्र विरुद्ध होता है ऐसा ही कालान्तर जन्य अन्तरको नहीं मानना भी शास्त्र विरुद्ध है और अन्य सिद्धान्तोंके विरुद्ध पड़नेसे कमलाकरजी भट्टका किसी ने अभीतक अनुमोदन नहीं किया, यह एक विशेष ध्यानमें रखनेकी बात है। इनके पूर्व इस लेखमें जितने भी सिद्धान्तकार और ग्रन्थकार हैं वे सभी दृक्तुल्य गणितको प्रतिपादित करनेवाले हैं। इन सभीसे कमलाकर भट्टका मत विरुद्ध होनेसे कोई भी विद्वान् इस मतको महत्त्व नहीं देता है। यदि कोई देते होंगे तो वह श्रद्धा जाड्य है।

इस विचारसे तो यही सिद्ध होता है कि सिद्धान्त हो या करण, यदि उसमें कालान्तर जन्य अन्तर हो गया हो तो बीज संस्कार देकर उस अन्तरको निकाल देना चाहिए और वेधतुल्य परिमाणोंको स्वीकार कर पञ्चाङ्ग बनाना चाहिए, जिसमें तिथि, नक्षत्र, योग, करण, ग्रहयोग, उदयास्त, ग्रहण आदि की गणित सूक्ष्म दृक्तुल्य वेधतुल्य होगी, तभी ही अपने किये हुए धार्मिक कार्य जिस समय होने चाहिये उस समय में होकर उसका जो फल होगा वह प्राप्त होगा, अन्यथा नहीं। इसीलिये इन सबकी गणित सूक्ष्म पद्धति से होनी चाहिये। सूर्यसिद्धान्त आदि सिद्धान्तोंकी तथा ग्रहलाघव आदि करणग्रन्थोंकी गणित स्थूल होनेसे अर्थात् अधिक समय बीत जाने पर उसमें अन्तर आता है। अतः वास्तवमें उन्हीं ग्रन्थकर्ताओंकी आज्ञाके अनुसार ग्रन्थोंमें संशोधन होना आवश्यक है। इसी हेतुसे भारतवर्षमें कुछ वर्षोंसे पर्याप्त आन्दोलन पञ्चाङ्ग विषयमें हो रहा है, किन्तु जितना यहां मिलना चाहिये उतना अभी नहीं मिला है। ग्रहलाघव सूर्यसिद्धान्त आदि ग्रन्थोंकी गणितसे ग्रहण अस्तोदय ग्रहचार आदि दृष्टिगोचर नहीं होनेसे और यहां ग्रहणमें एक घण्टे तकका अन्तर होनेसे विद्वानोंमें पर्याप्त विचार होने लगा। और संशोधनकी चर्चाएँ भी आरम्भ हुईं। शके १८२६ में श्रीशङ्कराचार्यजी महाराजकी अध्यक्षतामें बम्बईमें प्रथम अखिल भारतीय ज्यौतिष सम्मेलन हुआ और भारतीय ज्यौतिषशास्त्र संशोधन का बीजारोपण किया गया, जिसमें भारतके प्रसिद्ध विद्वान् उपस्थित थे। वह सम्मेलन अपूर्व ऐसा था। दूसरा सम्मेलन पूनामें सन् १९१७ में हुआ जिसमें २३ अयनांशके आसन्न अयनांश और सूक्ष्म परिमाणोंको विद्वानोंने स्वीकृत किया। तथा और भी एक दो छोटे सम्मेलन हुए। तदनन्तर पञ्चाङ्गैक्य-मण्डल पूना द्वारा पूनामें शके १८४७ में श्रीमन्त श्री १०५ औंध महाराजके सभापतित्वमें सम्मेलन

भराया गया, जिसमें ग्रहलाघवपक्ष, चैत्रपक्ष, रैवतपक्ष आदि पक्षोंके पक्षोंने अपना अपना निर्णय सभामें उपस्थित किया और उसमें चैत्रपक्ष ही प्रवल सिद्ध हुआ। अनन्तर राजासाहबकी स्टेटमें चैत्रपक्षीय (केतकी) पञ्चाङ्ग प्रकाशित होने लगा। पुनः सन् १६३४ में मैसूर सरकारके आश्रयमें मैसूरमें द्वितीय कर्नाटक ज्योतिष-परिषद् हुई, जिसमें चैत्रपक्ष ही सर्वमान्य किया गया। इसके अनन्तर इन्दौर सरकारके आश्रित पञ्चाङ्ग-संशोधन-सभा द्वारा सन् १६३५ में अखिल भारतीय ज्योतिष-सम्मेलन महामना श्री पं० मदनमोहन मालवीयजीके सभापतित्वमें हुआ, यह सबको विदित ही है। इस प्रकार भारतमें पञ्चाङ्ग संशोधनके लिए पर्याप्त आन्दोलन हो चुका है, हो रहा है और होगा। क्योंकि अब भारतीय जनता अन्धश्रद्धा वाली नहीं है। अब प्रत्यक्ष प्रमाण ही प्रमाण माना जायगा और परम्पराकी प्रणालीके अनुसार संशोधन भी करना ही पड़ेगा। क्योंकि अब केवल गणितागत अङ्कोंके ऊपर श्रद्धा रखकर धार्मिक कार्योंका करना निरी भूल है और वह गणितके अङ्क प्रत्यक्ष आकाशीय घटनाओंसे निकटवर्ती सम्बन्ध रखते हैं वा नहीं इस ओर जनता का पूरा पूरा ध्यान पाया जाता है। इसमें आपको विश्वास होगया होगा कि यदि गणितागत अङ्क आकाशीय घटनाओंसे नहीं मिले तो उसे शुद्ध करना चाहिए, जिससे गणित शुद्ध होकर धार्मिक, जातक, ताजिक आदिका निर्णय ठीक २ होवे और ज्यौतिषशास्त्र पर जनताका विश्वास फिरसे दृढ़ होवे। अब यदि ग्रहलाघव आदि करण-ग्रन्थ और सिद्धान्तोंकी गणित दृक्तुल्य नहीं आती तो उसमें क्या संस्कार करना आवश्यक है? अथवा किस पद्धतिको स्वीकार करना चाहिए? आदि विचार आगामी अङ्कोंमें सविस्तर किया जायगा।

मकर संक्रान्तिका फल

गताङ्कमें हम मकर-संक्रान्तिका फल लिखनेकी सूचना दे चुके हैं; तदनुसार यहां संक्रान्ति-फल लिखा जाता है। इस संक्रान्तिके वाहन, वस्त्र, भूषण, लेपन, भक्षण, स्थिति, गमन-दिशादिका विचार करनेसे सब का निष्कर्ष (फल) निम्न है—

संसारमें क्लेश, आर्य-लोग, ब्राह्मण, क्षत्रिय, सन्यासी, जमींदार, गर्भिणी-स्त्रियां, राजवर्ग और गौ-अश्वादि चतुष्पद प्राणियोंको पीड़ा हो। धान्य घृतादि पदार्थ तेज। अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, चौरभय, वायु का उपद्रव, पूर्व दक्षिण देशोंमें युद्ध दुर्भिक्षादि भय। बंगाल, बिहार, आसाम, मद्रास, कलिंग, मगध और समुद्रतटवर्ति प्रान्तोंको भय। पीले रंगकी प्रत्येक वस्तु तेज हो। विशेषकर हल्दी, सुवर्ण, चान्दी, मोती, ताम्बा, लोहा और घृतादि रस पदार्थोंका भाव अधिक तेज होगा। नेत्र-रोग अतिसारादि-रोगोपद्रव हों। आगामी वर्षाकाल मध्यम रहे। —सम्पादक।

पहले भूदेव

[कवयिता— श्री पं० कुलशेखरजी]

कैसा भी कराल काल दुस्तर न आये, किन्तु होते ना निराश वे प्रसिद्ध सिद्ध नेता थे।
बाहु-बल ही पर भरोसा रखते थे सदा, आत्म-बल धारी सन्मार्गके प्रणेता थे॥
कहै "कुलशेखर" समस्त महि-मंडलमें, ये ही ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मदेव धर्मवेत्ता थे।
दुःख नहिं पाते वीर-पुङ्गव कहाते, ऐसे पूर्वज हमारे विश्व-विजयी विजेता थे॥

कालाय तस्मै नमः

दैवज्ञकी दृष्टिमें संसारचक्र

सन् १९४३ ई० का भीषण भविष्य

महायुद्ध शीघ्र समाप्त नहीं होगा

[लेखक—श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय']

वर्तमान विश्वव्यापी महासंग्रामसे कई बड़े बड़े राष्ट्र भस्मसात् हो रहे हैं, बड़े २ ऐश्वर्यशाली पार्थिव (सम्राट्) पार्थिव (मट्टीके) हो रहे हैं। ऊँचीसे ऊँची सभ्यता रसातलमें पहुंच रही है। बड़े बड़े दानवी-सभ्यताके अनुयायी अपने आपको दैवी-सभ्यताके संस्थापक मनवाने का हठात् भय दिखा रहे हैं। किन्तु कराल कालके उदरमें आज पर्यन्त क्या क्या नहीं गया? जिनमेंसे किसी किसीकी अभी भी थोड़ी बहुत स्मृति-सी रह गई है। इस बातको महान् त्यागी एवं महान् विद्वान् भर्तृहरिने कितने सुन्दर शब्दोंमें अङ्कित किया है—

भ्रातः! कष्टमहो महान्स नृपतिः सामन्तचक्रं च तत्
पार्श्वे तस्य च साऽपि राजपरिषत्ताश्चन्द्रबिम्बाननाः।
उद्रिक्तः स च राजपुत्रनिवहस्ते बन्दिनस्ताः कथाः
सर्वं यस्य वशादगात्स्मृतिपथं कालाय तस्मै नमः॥
(वै० श०)

[हे भाई! कैसे कष्टकी बात है! पहले यहाँ कैसा राजा राज करता था, उसकी सेना कैसी थी, उसके राजपुत्रोंका समूह कैसा था, उसकी राजसभा कैसी थी, उसके यहाँ कैसी कैसी चन्द्रमुखी स्त्रियाँ थीं, कैसे अच्छे-अच्छे चारण भाट और कहानी कहने वाले उसके यहां थे! वे सब जिस कालके कराल गालमें चले गये हैं, उसी कालको मैं नमस्कार करता हूं]

सन् १९४३ ई० का भीषण भविष्य

पौष कृष्णा १० शुक्रवारको (इस हेमन्ताङ्क प्रकाशित होनेसे १५ दिन पूर्व ही) सन् १९४३ ई० आरम्भ हो रहा है। इस ईसाई नववर्षके प्रारम्भकी (नवमी गुरुवारको निशीथ कालीन लग्न कुण्डलीकी) ग्रहचार परिस्थितिका सम्यक्तया विचार करनेसे हमें जो प्रतीत हो रहा है, उसका कुछ स्पष्टीकरण हम यहां दे रहे हैं। 'श्रीस्वाध्याय'के पाठक इस समय इसी पर सन्तोष रक्खें। समयकी परिस्थितिके कारण अधिक स्पष्टीकरण करनेमें हम असमर्थ हैं।

भारत तथा भारतेतर अन्यान्य राष्ट्रोंके कर्णधारों की जन्मकुण्डलियां तथा तत्तद्देशोंकी ग्रहचार परिस्थिति देखनेसे हमें तो यही प्रतीत हो रहा है कि संसारकी रक्षा भगवान् ही कर सकते हैं। ग्रह परिस्थिति अत्यन्त विषम-पथकी पथिक हो रही है। दानवी अहंमहमिकाके कारण जितना भी विनाश हो वह थोड़ा ही है। जापान हो अथवा जर्मनी, इंग्लैण्ड हो अथवा अमेरिका, सभी तमोगुणसे अन्धे होकर एक दूसरेको अहंपूर्विकासे खा जाना चाहते हैं। होना तो वही है जो भगवान्की इच्छा होगी। वर्तमान् समयमें इस महान् भयानक दानव युद्धमें दैवी सम्पत्तिके प्रेमी भी 'घुणगोधूम' न्यायसे पिसे जारहे हैं। भारत भी उन पिसे जाने वालोंमेंसे एक है। विजय किसीकी भी हो, विजयी राष्ट्र जब तक दैवी

सम्पत्तिका पोषक प्रचारक तथा सेवक न होगा तब तक विजित तथा विजयी दोनों सुखी नही हो सकते। आज तकका प्राचीन इतिहास यही बतला रहा है। वर्तमान ग्रहपरिस्थिति जिन २ राष्ट्र तथा राष्ट्रकर्णधारों के लिए अनुकूल है वे यदि दैवीसम्पत्तिके अनुयायी न हुए तो वे भी राष्ट्रके साथ ही कालके कराल गालरूपी भ्राष्ट्र (भट्टी) में भस्मसात् हो जाएँगे।

हमारे भारतको इस वर्षमें महान् आपत्तिका साम्मुख्य होगा। भारत यदि स्वतन्त्र होता तो बड़ी उदारतासे इन आपत्तियोंका मुँहतोड़ प्रयत्न करता, परन्तु परतन्त्रताके कारण जालमें बंधे हुए सिंहके समान सब कुछ विवश होकर सहेगा। इसके अतिरिक्त उसके पास और कोई उपायान्तर नहीं। हां, भगवत्प्रार्थना, हृदयके सत्य-सङ्कल्प आदिसे अपने पारतन्त्र्यकी शृङ्खलाओंको तोड़कर भारत स्वतन्त्र हो सकता है तथा अपने सुहृदोंका उपकार एवं शत्रुओंका विनाश भी कर सकता है। किन्तु आज तो उसे सच्चे अर्थमें शत्रु तथा मित्रोंकी परख करनेका भी अधिकार नहीं, ऐसी स्थितिमें यदि भारतको असह्य आपत्तियाँ भोगनी पड़ें तो इसमें आश्चर्य ही क्या। यद्यपि इस वर्षकी ग्रह-परिस्थिति भारतके लिए अनिष्टकर ही प्रतीत हो रही है; तथापि इसका अर्थ यह नहीं कि परिणाममें वह इसी प्रकार असमर्थ रहेगा। इस महायुद्धकी समाप्तिके अनन्तर भारत को सुप्रभातका प्रकाश भी दिखाई देगा और पुनः उसके सोनेके दिन भी जाग उठेंगे। किन्तु इस समय उसे सोना नहीं चाहिए, सोनेसे सोना नहीं मिलेगा और सोनेके (सुवर्णके) बिना सुखसे सोना भी नहीं मिलेगा; अस्तु।

भारतको पूर्वकी ओरसे तथा उत्तरकी ओरसे भी आपत्तिका अधिक भय है। यों तो दक्षिण-पश्चिम से भी भयकी न्यूनता नहीं। भारतके कुछ कर्णधारोंके सिद्धान्तोंसे तथा उनकी ग्रह-परिस्थितिसे तो यही प्रतीत होरहा है कि भारत स्वतन्त्र हो कर ही रहेगा। संसारके मानचित्रमें अत्यधिक उलटफेर होगा। आज यह निश्चितरूपसे कुछ नहीं कहा जा सकता कि कौन कौनसे राष्ट्र पूर्ण स्वतन्त्र रह सकेंगे। स्वतन्त्र राष्ट्रका लक्षण श्रीराष्ट्रालोकमें यों लिखा है—

> परराष्ट्रस्य सम्बन्धः सेना कोषश्च सर्वथा।
> यत्र हस्ते राष्ट्रियाणां स्वतन्त्रं राष्ट्रमस्ति तत्॥
> स्वतन्त्रं त्र्यमेतत्स्यात् यत्र राष्ट्राणि तानि तु।
> राष्ट्रसंख्यां हि गच्छन्ति कर्षन्ति च महद्यशः॥

[राष्ट्रान्तरोंके साथ सम्बन्ध, सेना तथा कोषकी सभी प्रकारकी व्यवस्था करनेके अधिकार तथा सामर्थ्य जिस राष्ट्रमें वहांके राष्ट्रियोंके हाथमें रहते हैं उसी राष्ट्रको स्वतन्त्र कहना चाहिए। जहां पर-राष्ट्रसम्बन्ध, सेना और कोषकी व्यवस्था स्वतन्त्र होती है उन्हींको वास्तवमें राष्ट्र कह सकते हैं, क्योंकि राष्ट्रोंकी गिनतीमें स्थान प्राप्त करनेके लिए पूर्ण स्वातन्त्र्यकी अपेक्षा सर्वदा ही रहती है। एवं महान् यशकी प्राप्तिमें भी राष्ट्रकी पूर्ण स्वतन्त्रता ही समर्थ हो सकती है।]

वर्तमान कालिक ग्रहोंसे इतना तो निश्चित ही प्रतीत हो रहा है कि भूमण्डलके पूर्वी प्रदेशों परसे पश्चिमी प्रभाव बहुत अधिक न्यून हो जायगा। भारतीय नृपतिवर्गके अधिकारोंमें न्यूनता आवेगी। कुछ नरेश देशहितके कार्यमें यशस्वी होंगे। यातायात की बहुत असुविधा होगी। प्रत्येक वस्तुका भाव अत्यधिक मँहगा होगा और कई आवश्यक वस्तुएँ दुष्प्राप्य हो जावेंगी।

इंगलेण्ड, डेन्मार्क, लेसर, पोलेण्ड, जर्मनी, पेलेस्टाईन, 'सीरिया, आयरलेण्ड, ईरान, एशिया-मायनर, डब्लिन, रसिया, स्काटलेण्ड, हालेण्ड, अफ्रिका, न्यूयार्क, मानचेस्टर, जिनेवा, स्टॉकहोम, फ्रान्स, इटली, खाल्डियासे बसरा पर्यन्त, रोम, शिकागो, बव्हेरिया, नार्वे, ट्रान्सवाल, लीव्हरपूल, वाशिंगटन, भारतवर्ष, अफगानिस्थान, ग्रीस, पोर्ट-सय्यद, आक्सफोर्ड और भारतमें मद्रास, बड़ौदा, कलकत्ता, म्हैसूर, निजाम हैदराबाद, प्रयाग, दिल्ली, बम्बई, उड़ीसा, बंगाल, सूरत इन प्रदेशों और नगरों

के लिए यह वर्ष आपत्तिकारक रहेगा। संयुक्तराज्य अमेरिका, बेल्जियम, इजिप्ट, यूरोपियन-तुर्की, आस्ट्रिया, चीन, तिब्बत, ब्रह्मदेश, उत्तर इजिप्ट, मेसोपेटोमिया, ग्रीस, जापान, अरबस्थान, आस्ट्रेलिया हंगरी, स्पेन, प्रशिया, रसिया, स्वीडन, ब्राथटन, पुर्तगाल. गलेशिया इन प्रदेशोंके लिए यह वर्ष कुछ अच्छा रहेगा। जिन कुछ प्रदेशोंके नाम दोनों स्थानोंमें आये हैं वे मध्यम रहेंगे।

युद्ध शीघ्र समाप्त नहीं होगा

'श्रीस्वाध्याय' के गताङ्कोंमें हम वर्तमान महायुद्ध और संसारकी परिस्थिति पर पर्याप्त प्रकाश डाल चुके हैं। अब इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि आनेवाला विक्रम सम्वत् २००० भी सब प्रकारकी आपत्ति एवं कठिनाइयोंका केन्द्र होगा। इसमें अनेक अभूतपूर्व घटनाएँ घटित होंगी। प्राणिमात्रके प्राण सङ्कटग्रस्त रहेंगे। महायुद्धके भीषण परिणामसे समस्त जनता व्याकुल हो उठेगी। आधिदैविक आधिभौतिक उपद्रव भी अधिक होंगे। दुर्भिक्ष, महामारी, भूकम्प, वायुप्रकोप, जलप्रकोप, अग्नि-प्रकोपादिसे जनधनकी अत्यधिक हानि होगी। राजपरिवार, राष्ट्रके कर्णधार एवं उच्च पदाधिकारियों-मेंसे कई असामयिक मृत्युएँ होंगी। घमासान जलयुद्धके कारण महासागरोंका जल रक्तरञ्जित हो उठेगा। महासंग्रामके लिए आगामी वर्ष उल्लेख-नीय होगा। जापान एवं जर्मनीकी ओरसे नये नये भीषण चमत्कार संसारके सामने प्रकट होंगे।

यहाँ कई सहयोगी ज्योतिर्विन्महानुभावोंका मत है कि "सं० २००० वि० में यह विश्वव्यापी महायुद्ध समाप्त होकर संसारमें सुखशान्तिका साम्राज्य स्थापित हो जायगा, तथा भारतको तो आषाढ़ तक ही विशेष भय है" इत्यादि। किन्तु हमारा मत इससे भिन्न है। सं० २००५ तक समस्त संसारमें पूर्ण शान्ति हमारे विचारसे स्थापित नहीं हो सकती। तब तक यत्र तत्र छोटे-मोटे युद्ध चलते ही रहेंगे। हां, यह अवश्य होगा कि संवत् २००० वि० में विश्वव्यापी महा-भयानक संग्राम होगा जिसमें समस्त राष्ट्रोंकी शक्ति बहुत अंशमें क्षीण हो जावेगी। उससे कुछ समयके लिए किसी देशमें क्षणिक शान्ति हो सकती है पर यह स्थाई शान्ति न होगी। आज जो मित्र हैं कलको वही शत्रु बनकर पुनः लड़ना आरम्भ कर देंगे। इस प्रकार संसारमें यत्र तत्र थोड़ी बहुत अशान्ति बनी ही रहेगी। भारतको भी अभी निकट भविष्यमें अनेक प्रकारकी आपत्तियाँ सहनी होंगी। हम तो चाहते हैं कि भगवान् हमारे उन दैवज्ञ मित्रोंकी भविष्यवाणी ही सत्य सिद्ध करें और संसारमें शीघ्र शान्ति स्थापित हो, किन्तु यह तो प्रभुकी इच्छा पर ही निर्भर है।

फाल्गुन शुक्लसे (ता० ७ मार्चसे) संसारमें अशान्ति विशेषरूपसे बढ़ने लगेगी। यहांसे महायुद्ध की भयानकता घोर रूप धारण करेगी। भयङ्कर संहार होना आरम्भ होगा। साथ ही अग्निकाण्ड दिग्दाह भूकम्प अनावृष्टि महामारी आदिसे भी महा उत्पात होंगे। बड़े बड़े नगर नष्ट भ्रष्ट होंगे। चैत्रसे आगेका समय भारतके लिए भी अच्छा नहीं है।

बृहस्पति और शनिका भयङ्कर परिभ्रमण

इस वर्षमें बृहस्पति और शनिकी स्थिति संसारके लिए सङ्कटापन्न है। अर्थात् यहाँ बृहस्पति अतिचारी हो कर मिथुनसे कर्क और कर्कसे सिंहमें भी प्रविष्ट हुआ है। वैसे साधारण गतिसे भी बृहस्पतिकी मिथुन कर्कमें स्थिति संहिता ग्रन्थोंमें राजविग्रह दुर्भिक्ष एवं संसारमें दारुण भयकारक मानी है; यथा—

मिथुने च गुरुर्याति तत्राब्दे दारुणं भयम्।
नृपाणां विग्रहस्तत्र स्वल्पं तोयं भविष्यति ॥
बृहस्पतिर्यदा कर्के स्वल्पो मेघः प्रवर्षति।
राजभिर्विग्रहश्चैव दुर्भिक्षं तत्र जायते ॥

फिर यदि अतिचारी हो कर मिथुन कर्क सिंहका भोग करे तब तो कहना ही क्या है, पहले ही करेला

और फिर नीम चढ़ा, अस्तु। इसका विशेष विवेचन श्री रा० कृ० संस्कृत कालेजके प्रधानाध्यापक श्री पं० विशुद्धानन्दजी ज्यौतिषाचार्य महोदयने अपने लेखमें किया है, वह हम इसी अङ्कमें साथ ही प्रकाशित कर रहे हैं।

वृषभका शनि भी राजयुद्ध एवं दुर्भिक्षकारक है, यथा—

कन्यायां मिथुने मीने वृषे धनुषि वा स्थितः।
शनिः करोति दुर्भिक्षं राजयुद्धं परस्परम्॥

चैत्र शु० ८ मंगलवार ता० १३ अप्रैलसे हमारा नया सौर वर्ष आरम्भ होगा। अतः 'श्रीस्वाध्याय' के आगामी अङ्क (वसन्ताङ्क) में वर्ष वर्षेश(जगल्लग्न) कुण्डली और अन्यान्य ग्रह योगोंके आधार पर सं० २००० वि० का सविस्तर भविष्यफल प्रकाशित करने का प्रयत्न करेंगे। पाठक चैत्र शु० १० को प्रकाशित होनेवाले 'वसन्ताङ्क' की प्रतीक्षा करें।

नौ वर्ष पूर्वकी भविष्यवाणी

विगत ६ वर्षोंसे हम जिस भावी भीषण-सङ्कट और विश्वव्यापी महायुद्ध तथा दैवी उत्पातों (दुर्भिक्ष, महामारी, बाढ़, बवण्डर, अग्नि प्रलय, जल प्रलयादि) से जन-धन-संहारकी सूचना देते आ रहे हैं उसकी सत्यता बहुत अंशोंमें तो प्रकट हो चुकी एवं हो रही है; तथा अब जो भीषण भविष्य शेष रहा है उसका सन्निकट समयमें ही साम्मुख्य होने वाला है।

आज से ठीक ६ वर्ष पूर्व सं० १९९० के माघ मासमें बम्बईके सुप्रसिद्ध साप्ताहिक 'श्रीवेङ्कटेश्वर-समाचार' पत्रके ता० १६ जनवरी १९३४ ई० के अङ्कमें हमारी एक विस्तृत भविष्यवाणी प्रकाशित हुई थी। उसका शीर्षक था—"उत्पात और अशान्ति की सम्भावना—दश वर्षके भीतर सभी महाशक्तियाँ क्षीण हो जाएँगी—कई राष्ट्र मट्टीमें मिल जाएँगे" इसी लेखमें हमने संसारकी सामाजिक परिस्थितिके साथ साथ महायुद्धका देशनिर्देशपूर्वक विस्तृत रूपमें विवेचन करते हुए लिखा था कि—

"सं० १९९१ से लेकर २००० वि० तकके दश वर्षोंमें संसारकी बड़ी बड़ी शक्तियां नष्ट हो जाएंगी। भीषण रक्तपात और विश्वव्यापी क्रान्ति होगी, जिसमें कई राष्ट्र मिट्टीमें मिल जाएँगे और अनेकोंका पुनरुत्थान भी होगा। संसारमें भूकम्प आवेंगे, फसलें नष्ट होंगी, साम्यवाद क्रान्ति और गुप्त-षड्यन्त्रोंका विशेष प्रचार होगा। राजतन्त्र-शासनप्रणालियोंमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होंगे। भारतमें दमनचक्रका दौरदौरा होगा। अत्याचार बढ़ेंगे, आर्थिक स्थिति भयङ्कर रूपमें खराब होगी, पूंजीपति और व्यापारियों के जीवन कष्टमय होंगे। राजा प्रजाका वैमनस्य उग्र रूप धारण करेगा, नये नये आन्दोलन होंगे और प्रतिदिन आश्चर्यजनक घटनाएँ सुननेमें आवेंगीं........" इत्यादि।

उसी समय 'हिन्दी-मिलाप' 'हिन्दी-बंगवासी' 'हिन्दू पञ्च' 'मारवाड़ी-ब्राह्मण' आदि कई प्रमुख पत्रकारों ने भी अपने अपने पत्रोंमें वह भविष्यवाणी उद्धृत की थी। किन्तु उस समयकी राजनैतिक परिस्थिति और आजकी परिस्थितिमें आकाश पातालका अन्तर है। आज युद्धके सम्बन्धमें भविष्यवाणी करना या यथार्थ स्थितिको प्रकट करना अपने ऊपर एक आपत्ति मोल लेना है। इसी कारण कई सुप्रसिद्ध पत्र प्रेस प्रतिबन्धोंकी भेंट हो चुके हैं और कइयोंने अग्रलेख लिखना ही बन्द कर दिया है। ऐसी स्थितिमें 'श्रीस्वाध्याय'के विज्ञ पाठक हमारी विवशताका अनुमान भी भली भांति लगा ही सकते हैं।

सं० १९९० के अनन्तर भी प्रतिवर्ष पत्रोंमें हमारी भविष्यवाणियां प्रकाशित होती रही हैं। सन् १९३९ की पहली सितम्बरको जब जर्मनीकी ओरसे पोलैण्ड पर प्रथम आक्रमण हुआ था उस समय भी कई पत्रकार मित्रोंने युद्धके सम्बन्धमें ज्योतिश्शास्त्रानुसार अपने विचार व्यक्त करनेके लिए हमें लिखा था। लाहौरके सुप्रसिद्ध साप्ताहिक (अब दैनिक) 'विश्वबन्धु'के सम्पादक श्री 'माधव' जी के विशेष आग्रह करने पर सन् १९४० के फरवरी मासमें 'विश्वबन्धु'के लिए हमने एक विस्तृत भविष्यवाणी लिखी थी। उसमें सं० १९९७ के १२ मासोंका भविष्य और महायुद्ध एवं संसारकी परिस्थितिके

सम्बन्धमें हमने अपने कुछ स्पष्ट विचार व्यक्त किये थे। ता० १७ मार्च १९४० के 'विश्वबन्धु' में पूरे दो पृष्ठोंमें वह भविष्यवाणी प्रकाशित हुई थी। उसका शीर्षक था—"महाभारतकालीन ग्रहोंका फेरा, विश्वका मानचित्र बदलेगा, इटली अमेरिका लड़ाईमें उतरेंगे, सागरोंका जल रक्तरञ्जित हो उठेगा, संवत् २००० तक संसारकी स्थिति पर ज्योतिश्शास्त्रकी दृष्टि" आदि। उसी भविष्यवाणीमें हमने लिखा था कि—"निकट भविष्यमें (मार्च अप्रैलमें) बेल्जियम, नारवे और स्वीडन को भी युद्धमें कूदकर अपरिमित हानि उठानी पड़ेगी" तदनुसार मार्चके अन्तमें ही नारवे आदि उक्त प्रदेशों पर जर्मनीका आक्रमण हुआ और इनका निपात हो गया, तथा उसी संवत्के ज्येष्ठ शुक्ल पक्षमें (त्रयोदशदिन पक्षमें) फ्रान्सका भी पतन हो गया था। इस कारण 'विश्वबन्धु' के उस अङ्ककी इतनी अधिक मांग आई थी कि कार्यालयमें एक भी प्रति शेष नहीं रही। पुनः वह न छप सकी। गत वर्ष स्वयं 'विश्व-बन्धु' के सम्पादकजीने उस भविष्यवाणीकी प्रति हमारे पाससे मँगवाकर उसकी प्रतिलिपि अपने पास रक्खी है। सन् १९४० के मार्चमें प्रकाशित हुई उस भविष्यवाणीका कुछ अंश हम यहां उद्धृत कर रहे हैं। इसके द्वारा 'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी पाठकों को ज्योतिश्शास्त्रकी सत्यता प्रकट हो जावेगी और विगत ३ वर्षोंके परिवर्तन तथा निकट भविष्यमें आने वाले सङ्कटकी सूचनाका ज्ञान भी हो जावेगा।

"गत सन् १९३९ की पहली सितम्बरसे यूरोपमें जिस युद्धका सूत्रपात हुआ है, यह निकट भविष्यमें किसी प्रकार भी रोका न जा सकेगा। इस विभी-षिकासे बचनेके लिए जितनी भी शान्ति चर्चाएं चलाई जावेंगी वे सब सं० २००० वि० तक विफल सिद्ध होंगी और परिस्थिति सुलझनेकी अपेक्षा अधिकाधिक उलझती हुई प्रतीत होगी। कुछ देरके लिए तत्कालीन परिस्थितिके अनुसार किसी प्रान्त विशेषमें एकाधिक बार क्षणिक शान्ति चाहे भले ही हो जावे, पर उसका स्थाई प्रभाव कुछ नहीं होगा। कोई भी राष्ट्र अपनी हठ न छोड़ेगा। इंगलेण्ड, फ्रान्स, रूस, जर्मन आदिकी कोई भी महाशक्ति अब किसी प्रकार भी शान्त न की जासकेगी। अतः सं० १९९७ के आरम्भसे पूर्व ही (मार्च अप्रैल १९४० से) यह युद्ध भीषण महायुद्धका रूप धारण करेगा।………

………संसारमें बाढ़ भूकम्पादि दैवीप्रकोपोंसे भी बहुत हानि होगी। वहाँ बहुतसे भूगर्भीय किले और सुरक्षित लाइनें (रक्षा पंक्तियाँ) टूट जावेंगी या भूकम्पसे चकनाचूर हो जावेंगी। जापान उन्नति के पथ पर अग्रसर होगा। चीन तथा पूर्वी एशिया में पश्चिमी शक्तियोंके अधिकारों पर आक्रमण किया जावेगा।………जिससे सारे संसार में खलबली उत्पन्न हो जावेगी और एक प्रान्त या देशमें ही नहीं समस्त विश्वमें इसकी भीषण प्रति-क्रिया होगी। भयङ्कर आधिदैविक आधिभौतिक उपद्रवों तथा अनेक प्रकारके पाशविक आक्रमणोंसे संसार भयभीत रोमाञ्चित हो उठेगा………

………इस महायुद्धका अन्त महासंहारके बाद विप्लव के रूपमें ही होगा, जिसमें बृटेन, फ्रान्स, रूस या जर्मनी ही नहीं समस्त राष्ट्र नवीनरूपमें प्रकट होते दिखाई देंगे या यों कहिये कि विश्वका मानचित्र ही एक दम बदल जायगा, जिसकी हम अभी कल्पना भी नहीं कर सकते।………वहां आधुनिक यूरोप भी नहीं रहेगा। विशेषतः नवीन प्रकारके व्यक्तितन्त्रका शासन-विधान सामने आयेगा। समुद्रतटवर्त्ती प्रान्तोंका अस्तित्व खतरेमें होगा। स्वेजनहर और कुछ एक महत्त्वपूर्ण बन्दरगाहों पर भीषण परिस्थिति उत्पन्न हो जावेगी। भूमध्यसागर, प्रशान्तमहासागर, अरबसागर एवं अतलान्तक महा-सागरका जल रक्तरञ्जित हो जावेगा।………

………सं० १९९७ से २००० वि० तक विश्वके साथ भारतमें भी अशान्तिका साम्राज्य रहेगा।……… पश्चिमोत्तर भारत (सीमान्त) की अल्प संख्यक जातियोंको विशेष आपत्तिका सामना करना पड़ेगा। बंगाल, बिहार, आसाम, सिन्ध, पञ्जाबका वातावरण अधिक अशान्त रहेगा। इसी अवधिमें

राष्ट्रिय महासभाका रूप भी सर्वथा परिवर्तित हो जायगा और देश पर विदेशी शक्तिके आक्रमणका भय उपस्थित होगा............................इससे राष्ट्रकी कठिनाइयाँ बहुत बढ़ जावेंगी । सं० १९९९ में भारतका वातावरण एकदम क्षुब्ध हो जावेगा, इसके परिणाममें भारतको अनेक प्रकारकी आपत्तियोंका सामना करना पड़ेगा।............................

........यत्र तत्र दंगे फिसाद, चोर डाकू लुटेरोंकी लूट खसोट एवं अवर्षण, जलप्लावन, शीताधिक्य, अग्नि वायु आदिके उपद्रवोंसे भी हानि होगी.................. इन सब कठिनाइयोंको पार करनेके बाद आगे भारत का भविष्य उज्ज्वल प्रतीत होता है।..................

....इन वर्षोंमें व्यापारमें भारी उथल पुथल मचेगी जिससे संसारके बहुतसे धनी निर्धन एवं निर्धनी धनाढ्य बन बैठेंगे । रङ्ग तथा वस्त्रके व्यापारियों को पर्याप्त लाभ होगा....... ....गेहूं और रुईमें भयङ्कर तेजी आवेगी। कर्पूर, राई, सरसों, जौ, चना, इक्षुरसोत्पन्न (गुड़ शकर खांड) और जलोत्पन्न वस्तुएँ, मादक व जहरीली वस्तुएँ, गन्धक पारा आदि, चांदी, सोना, मोती, तांबा, लोहा और पिप्पली आदिका भाव विशेष तेज रहेगा .... ।

('विश्वबन्धु' १७ मार्च १९४०)

शुक्रोदयास्त

[लेखक—ज्योतिर्विद्यारत्न श्री पं० कृष्णचन्द्र शर्मा ओझा, केतकी पञ्चाङ्गकर्ता]

ज्योतिश्शास्त्रमें गुरु शुक्रके अस्तोदयको महत्त्व प्राप्त होनेका श्रेय यदि देखा जाय तो वह मुहूर्त और धर्मशास्त्रके कारण ही है। गुरु शुक्रके अस्तमें प्रत्येक धार्मिक शुभकार्योंका निषेध होनेसे जनताका ध्यान गुरु शुक्रके अस्तोदयकी ओर रहा ही करता है। इस भारतवर्षमें अनेक पन्थ (अनेक मार्ग) दिखाई देते हैं। ऐसे ही अनेक पञ्चाङ्ग भी दृष्टिगोचर होते हैं, उन पञ्चाङ्गोंमें परस्पर एकवाक्यता न होनेसे गत शुक्रास्त के सम्बन्धमें भारतके कोने २ में हलचल होगई। किसी पञ्चाङ्गमें १५ दिन पूर्व शुक्रास्त और किसी पञ्चाङ्गमें १५ दिनके पश्चात शुक्रास्त लिखा था। इस प्रकार १५ दिनका अन्तर होनेसे धार्मिक विधियां करनेमें जनताको एक बड़ी आपत्तिका सामना करना पड़ा। किस पञ्चाङ्गके अनुसार धर्माचरण करें और किस पञ्चाङ्गकी गणित ठीक है ? इस पर पर्याप्त चर्चा हो चुकी है। यहां यदि एक पञ्चाङ्गमें अस्त पूर्व ही १५ दिनके होनेसे और दूसरे पञ्चाङ्गमें शुक्रास्त १५ दिन पश्चात् होनेसे धार्मिक विधिको एक पञ्चाङ्गके अनुसार करते हैं तो दूसरे पञ्चाङ्गमें शुक्रका अस्त लिखा है। यह महान् आपत्ति उपस्थित होती है। इस आपत्तिका प्रधान कारण पञ्चाङ्गकर्ता हैं। यदि भारतके सभी पञ्चाङ्गकर्ता सूक्ष्म वेधतुल्य पद्धतिको स्वीकार कर लें तो यह आपत्ति आ ही नहीं सकती और भारतवर्षमें एकवाक्यता हो सकती है। अस्तोदय प्रत्यक्ष प्रमाण है, इसमें पक्षपातका कोई झगड़ा है ही नहीं। किसी पञ्चाङ्गमें यदि १५ दिन पूर्व और किसी पञ्चाङ्गमें १५ दिन पश्चात् शुक्रोदयास्त लिख दिया हो तो शुक्र प्रत्यक्ष दीख रहा है या नहीं इसकी परीक्षा स्वयं जनता कर सकती है। ऐसा ही एक उदाहरण सन् १९३८ का है। पूनाके तिलक पञ्चाङ्गमें ता० १५।३।३८ को शुक्रोदय लिखा था और केतकी पञ्चाङ्गमें ता० २८।३।३८ को उदय लिखा था, यह १५-१६ दिनका अन्तर अक्षम्य होनेसे भारी हलचल हो गई थी और ता० २८।३।३८को ही ठीक शुक्रोदय हुआ ऐसा जनताको प्रत्यक्ष शुक्रके दर्शनसे निश्चित हुआ, तथा कुलाबा ऑबझरवेट्रीके सञ्चालकोंने 'शुक्रोदय ता० २८।३।३८ को हुआ' ऐसा प्रकट किया था। एवमेव ता० २८।३।३८ के अनन्तर जनता प्रतिदिन शुक्रके दर्शन

किया करती थी। ऐसी स्थितिमें तिलकपञ्चाङ्गके अनुयायी अपनी भूलका ही समर्थन करते रहे, किन्तु उन्हींके पत्तके नागपुरवालोंने यह भूल जनताको प्रकटकी थी। यही उदाहरण वर्तमान वर्षका है।

यदि इस प्रत्यत्त शास्त्रमें कोई हठ करे कि हमारा ही लिखा ठीक है, अन्य ठीक नहीं तो यह न्याय्य पद्धति नहीं है। गत शुक्रास्त सम्बन्धी जो अन्तर पञ्चाङ्गोंमें हुआ उसके प्रधान कारण निम्नलिखित हैं—

गुरु शुक्रके उदयास्त-सम्बन्धमें सिद्धान्तकारोंने तथा करण ग्रन्थकारोंने ग्रहोंके कालांश निश्चित किये हैं, अर्थात् सूर्यके इतने समीप ग्रह आनेसे वह अस्त होता है और इतने अंश ग्रह (सूर्यसे) दूरी पर जानेसे उदय होता है। किन्तु सब सिद्धान्तोंके तथा सब करणग्रन्थोंके कालांश भिन्न २ होनेसे गुरु शुक्रके उदयास्त भिन्न २ आते हैं।

कालांश ग्रन्थकारोंने अपने अपने अनुभवसे निश्चित किए हुए हैं और यह कालांश अनुभवसे ही सिद्ध करने पड़ते हैं। प्राचीन ग्रन्थकारोंने उनके समय-में अपने अनुभवसे जितने अन्तर पर उदयास्त होता दिखाई दिया उतने कालांश उन्होंने मान लिये। गुरु शुक्र आदि ग्रह वक्रगति होने पर, तथा पृथ्वीके समीप होने पर उनका तेज बढ़ जाता है, ऐसी स्थिति में कालांशमें भी अन्तर होना आवश्यक ही है, और भी कारण हैं कि अन्यान्य अक्षांशोंके अन्तरसे, सर्वत्र एक त्तितिज नहीं होनेसे कालांशमें भिन्नता होना स्वाभाविक है। इस भिन्नताके कारण ही कालांश निश्चित करनेमें भारतीय विद्वानोंका स्थाई एक मत नहीं हो सका।

शुक्रका उदयास्त जाननेके लिये भिन्न २ ग्रन्थ-कारोंने निम्न लिखित भिन्न २ कालांश माने हैं। प्रथम सूर्यसिद्धान्तमें ६। द्वि० सू० सि०, रोमश, ब्रह्म, सोमसिद्धान्तमें १०। प्रथम आर्यसिद्धान्तमें ६। ब्रह्मगुप्त, सिद्धान्तशिरोमणिमें १०। लल्ल, करणकुतु-हलमें ६। द्वि० आर्यसिद्धान्तमें ८। ग्रहलाघवमें ७। इस प्रकार ग्रन्थोंमें कालांश कहे हुए हैं। सबहीमें एकवाक्यता नहीं होनेसे उनकी गणित भी भिन्न २ आयगी यह स्वयं सिद्ध बात है।

भिन्न २ पञ्चाङ्गोंमें अन्तर होनेका और भी एक कारण है, वह यह कि ग्रहलाघव, सूर्यसिद्धान्त, करणकुतूहल आदिसे जिस पञ्चाङ्गमें ग्रहचार दिये होते हैं और उस ग्रहचारसे जिस पञ्चाङ्गोंमें गुरुशुक्र के अस्तोदय लगाये जाते हैं, वह ग्रहचार स्थूलप्राय होनेसे उससे लाया हुआ अस्तोदय स्थूल ही आयगा अर्थात् अन्तरसे ही आयगा यह भी स्वयं सिद्ध है।

कालांश-पद्धतिसे गुरुशुक्रके उदयास्तमें सदा कुछ न कुछ अन्तर रहा ही करता है, उसके प्रधान २ कारण ऊपर दिये हुए हैं। केतकी ज्योतिर्गणित आदि ग्रन्थोंमें गुरु शुक्रके उदयास्तकी गणित कालांश-पद्धतिसे न देकर उन्नतांश-पद्धतिसे दी गई है। कालांश-पद्धतिकी अपेत्तया यह उन्नतांश-पद्धति सूक्ष्म और प्रत्यत्त दिखाई देती है, ऐसा आजतकका अनेक विद्वानोंका अनुभव है, और केतकी पञ्चाङ्गमें इसी उन्नतांश-पद्धतिसे अस्तोदय दिया हुआ होनेसे भारत की जनता अनेकों वर्षोंसे अनुभव ले रही है। वह ठीक है ऐसा कई विद्वानोंका अनुभव है।

"भारतीय ज्यौतिषशास्त्रका इतिहास" के रचयिता स्व० शङ्कर बालकृष्ण दीत्तितजी अपनी पुस्तकके पृ० ४४६ पर लिखते हैं कि—

"कालांश-पद्धतिकी अपेत्तया उन्नतांश पद्धतिसे लाए हुए उदयास्त ठीक २ मिला करते हैं और वही पद्धति मानने योग्य है ताकि उदयास्त ठीक २ निकला करे।"

यदि भारतीय पञ्चाङ्ग कर्ताओंको अखिल भारत-वर्षमें उदयास्त सम्बन्धी एकवाक्यता करनी हो तो उन्नतांश-पद्धतिके अनुसार ज्योतिर्गणित द्वारा उदयास्त लाकर अपने २ पञ्चाङ्गोंमें देवें ताकि मतभेदसे जो श्रद्धावान् जनताकी धार्मिक बाधाएँ होती हैं वह नहीं होवें। यदि किसी ज्योतिर्विद् महाशयको ज्योतिर्गणित द्वारा कष्ट करनेकी इच्छा न हो तो हमसे गणित की हुई मंगा कर इसी पद्धतिसे सर्वत्र पञ्चाङ्गोंमें उदयास्त देकर भारतवर्षमें उदयास्त सम्बन्धी एकवाक्यता निर्माण करें।

श्री महाशिवरात्रि

[लेखक—श्री पं० बलजिन्नाथजी शास्त्री, बी० ए०]

शिवरात्रि समस्त भारतवर्षके हिन्दुओंका एक बड़ा त्यौहार है। परन्तु हम काश्मीरवासियोंका तो यह सबसे बड़ा त्यौहार है। हिन्दुओंका प्रत्येक पर्व-दिन अनेक रहस्यों तथा प्रयोजनोंसे पूर्ण होता है। ये रहस्य अनेक प्रकारके होते हैं। परन्तु अधिकतर दो प्रकारके होते हैं। प्रायः प्रत्येक पर्व-दिन और उस दिनके मनानेकी रीतिके आधार दो होते हैं। (१) दार्शनिक, (२) पौराणिक। कहीं कहीं या प्रायः सर्वत्र ही इन दोनों आधारोंका भी परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इस सिद्धान्तको ही दृष्टिकोणमें रखकर इस लेखमें शिवरात्रिकी विवेचना की जाएगी।

'शिव' शब्दका अर्थ होता है कल्याण, मङ्गल, सुख आदि। अर्थात् शिव शब्दसे परम आनन्द अर्थ अभिप्रेत है। परम आनन्द स्वरूप परमात्माका है। इस कारण शिव परमात्मा का नाम है। वेदान्तके आचार्योंका उपदेश भी है कि "चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्" अर्थात् मेरा स्वरूप चित् आनन्द है मैं शिव हूँ। इस शिवकी रात्रिको कहते हैं शिवरात्रि। परमात्मा तो वस्तुतः निर्गुण निष्क्रिय और विशेषणोंसे रहित है। परन्तु सब गुण सब क्रियाएँ और सब विशेषण उसीकी शक्तिसे उसीमें भासते हैं, इस कारण किसी अवस्थामें उसके भी विशेषण मानने पड़ते हैं। जिस समय परमात्माकी शक्ति इस सारे विश्वका संहार करती है और महाप्रलय हो जाता है उस समय परमात्माके विना और कुछ नहीं शेष रहता है। फिर एक सहस्र दिव्ययुगों तक यही अवस्था रहती है। इस अवस्थाको ही शिवकी रात्रि कहते हैं। कई शास्त्रोंमें इसे ब्रह्माकी रात्रि भी कहा गया है। इसको महाकल्प भी कहते हैं। हमारे यहां शिवरात्रिके दिन व्रत रखते हैं और बहुत ही प्रसन्न होते हैं। भारतवर्षमें हिन्दू लोग प्रायः होली, दिवाली अथवा दसहरेके दिन अधिक प्रसन्नता मनाते हैं। परन्तु हमारे देशमें शिवरात्रिके लिए ही सब प्रसन्नताएँ सञ्चित करके रखी जाती हैं। शेष त्यौहारों में तो इन मनोविनोदोंका केवल थोड़ा सा ही अंश व्यय किया जाता है। शिवरात्रिके दिन हमारे घरोंमें महादेव और पार्वतीके विवाहकी कथाएँ सुनाई जाती हैं। और यहांके हिन्दू यह मानते हैं कि शिवरात्रिके दिन ही गिरिजाका विवाह गिरीशसे हुआ है। इसी कारण इस दिन विनोद मोद प्रमोद आदिका आधिक्य होता है। भला एक छोटे मोटे ग्रामीण रईसका विवाह हो तो कितनी प्रसन्नता मनाई जाती है फिर जब राजाओंके राजा, देवताओंके भी देवता और ईश्वरोंके भी ईश्वर भगवान् परमेश्वरके विवाह का दिन हो तो लोगोंके आनन्दका ठिकाना ही क्या। अब थोड़ा सोचिए कि पूर्वोक्त शिवरात्रिका महादेव के विवाहके साथ क्या सम्बन्ध है ? यह तो बता दिया कि महादेव अर्थात् शिव परमेश्वरका नाम है। इस महादेवकी पत्नी महादेवी अर्थात् पार्वती कौन है ? वह इस परमात्माकी अपनी शक्ति है। उस शक्तिके साथ इस रात्रिको शिवका विवाह होता है। विवाह क्या होता है ? वरको वधूकी प्राप्ति ही को विवाह कहते हैं। तो इस रात्रिमें भी शिवको शक्तिकी प्राप्ति हो जाती है। शिवको शक्तिका समागम होता है। शास्त्र कहते हैं कि शिवके शरीरमें ही जगदम्बा पार्वती समा गई, जब कि शिव अर्धनारीश्वर रूप बने तो इसी शिवरात्रिको शक्ति शिवके शरीरमें समा गई। वह इस प्रकारसे— सृष्टिसे पहिले केवल पर-ब्रह्म ही था। अर्थात् केवल शिव ही था। अनन्तर शिवकी परम स्वातन्त्र्यशक्तिसे ही शिवसे शक्ति आदि के क्रमसे सारे विश्वकी उत्पत्ति हुई। अर्थात् शिवके

शरीरसे शक्ति प्रादुर्भूत हुई और वह शक्ति ही समस्त विश्व-आकार बन गई। इसी कारण शैवशास्त्र में शिव और शक्तिका लक्षण इस प्रकार बताया है—

"शक्तयोऽस्य जगत् सर्वं शक्तिमान् स महेश्वरः"

अर्थात् समस्त जगत् ही इस शिवकी शक्तियाँ हैं। और वह महेश्वर शक्तिमान् (शक्तियोंका स्वामी) है। महाप्रलयके समय इसी शिवकी संहारशक्ति द्वारा समस्त पदार्थोंका जब नाश होता है, तो शिवकी शक्ति पुनः शिवमें ही लीन हो जाती है। क्योंकि पदार्थोंके परमात्मामें लीन होनेको ही संहार कहते हैं। यह है शक्तिका शिवमें समा जाना, यह है पार्वती का शिवके साथ समागम होना और यही है शिव और पार्वतीका विवाह। इसी अभिप्रायसे शैवशास्त्रके परम गुरु भगवान् उत्पलदेव एक स्तोत्रमें कहते हैं—

पानाशनप्रसाधनसम्भुक्तसमस्तविश्वया शिवया।
प्रलयोत्सवसरभसया दृढमुपगूढं शिवं वन्दे ॥
(शि० स्तो०)

संस्कृत भाषामें एक वैचित्र्य है जिसे श्लेष कहते हैं। श्लिष्ट रचनाका पूरा अनुवाद किसी भी भाषामें नहीं हो सकता है। इस कारण इस पद्यकी कुछ व्याख्या करते हैं— विवाहके समय वधूको खिलाते पिलाते तथा अलंकृत करते हैं। फिर वह वधू रतोत्सव (प्रलयोत्सव) में वेगयुक्त होकर वरका आलिङ्गन करती है। तो इस दुल्हन अर्थात् शिवा (पार्वती) ने तो पान खान और अलंकृतिमें समस्त विश्वको ही समाप्त किया है और अब प्रलयोत्सव (प्रलयके अर्थ नाश और सम्भोग दोनों होते हैं) में वेगयुक्त होकर इसने शिवको कसकर आलिङ्गित किया है। इस अवस्थामें वर्तमान शिवको मैं नमस्कार करता हूं। "प्रलयकालमें सब विश्वको खाकर शक्ति शिवमें लीन हो जाती है" यह अर्थ इस पद्यमें विचित्र प्रकारसे कहा गया है। यही है शिव और शक्तिका विवाह। इसी विवाहके उपलक्ष्यमें हम शिवरात्रिको मनाते हैं। इसी विवाहके आधार पर पौराणिक शिव पार्वती विवाहकी गाथाओंकी रचना हुई है।

यह शिवरात्रिका वास्तविक स्वरूप तो है, परन्तु यह शिवरात्रि शिवकी ही शिवरात्रि है। हम तो अज्ञानके कारण स्वयं शिव होते हुए भी अपने आपको शिव नहीं मानते हैं। तो भला हम ऐसी शिवरात्रिको कैसे मना सकें। हमारे लिए शिवरात्रिका क्या स्वरूप है? अब इस बातका विचार किया जाता है— यह तो वेदान्तोंमें बहुत स्थानों पर कहा गया है कि सब कुछ शिव (परमात्मा) है, मैं भी परमात्मा अर्थात् शिव हूँ और तू भी शिव ही है। वस्तुतः हम सब शिव ही हैं। परन्तु हम अपने शिव भावको भूल गए हैं। हम उसे समझते नहीं। जब भक्ति आदि उपायों द्वारा हम ज्ञानको प्राप्त करेंगे तो हमें यह ज्ञात होगा कि हम वस्तुतः शिव हैं। शिव सर्वशक्तिमान् हैं, तो हम भी सर्वशक्तिमान् बन जाएंगे। बन क्या जाएंगे सर्वशक्तिमान् होते हुए ही अपनी भूली हुई सर्वशक्तिमानताको पुनः समझ लेंगे। वही हमारा मोक्ष होगा। यही वस्तुतः मोक्षका स्वरूप है। पूर्वोक्त आचार्य उत्पलदेव भी ऐसा ही कहते हैं—

मोक्षस्य नैव किञ्चिद् धामास्ति न चापि गमनमन्यत्र।
अज्ञानग्रन्थिभिदा स्वशक्त्यभिव्यक्तता मोक्षः ॥
(शि० स्तो०)

अर्थात् मोक्षका कोई स्वर्गकी भांति नियत स्थान नहीं। नाही मोक्षकी अवस्थामें जीवको कहीं जाना होता है। किन्तु अज्ञान ग्रन्थिके टूट जाने पर अपनी ही शक्तिका प्रकट होना मोक्ष है। यह जीवन्मुक्त दशा ही हमारी शिवरात्रि है। अथवा इस दशा की प्राप्ति ही हमारे लिए शिवरात्रि है। इस अज्ञान की अवस्थामें हम अपनी ज्ञानादि शक्तिको भूल गए हैं। अथवा यों कहिए कि हम अपनी शक्तिको खो गए हैं। जिस प्रकार दक्ष प्रजापतिके यज्ञमें महादेव अपनी शक्ति-रूप भवानीको खो गए थे और फिर समाधियोगकी सिद्धिके अनन्तर विवाह द्वारा अपनी खोई हुई प्रेयसीको उन्होंने पार्वती रूपमें पुनः प्राप्त

किया। इसी प्रकार हम जीव भी भक्तियोगकी सिद्धि के अनन्तर ज्ञान द्वारा अपनी खोई हुई शक्तिको स्वतन्त्रता रूपमें (मुक्ति रूपमें क्योंकि स्वतन्त्रता मुक्ति का ही नाम है) पुनः प्राप्त करते हैं। यही हमारी शिवरात्रि है। शिव अर्थात् कल्याणकी रात्रि है। इस शिवरात्रिमें हमारे शरीरमें पशु (जीव) रूपमें रहने वाले शिवका अपनी शक्तिके साथ समागम अर्थात् विवाह होता है। यह आत्मज्ञानकी अवस्था ही जीवोंकी शिवरात्रि है। इस शिवरात्रिका स्वरूप भी भगवान् उत्पलदेव दो पद्योंमें बताते हैं—

यत्र सोऽस्तमयमेति विवस्वाँ-
श्चन्द्रमःप्रभृतिभिः सह सर्वैः।
कापि सा विजयते शिवरात्रिः
स्वप्रभाप्रसरभास्वररूपा॥ (शि० स्तो०)

[उस अलौकिक शिवरात्रिकी जय है, जो कि अपनी ही प्रभासे चमकती है। जहां सूर्य भी अस्त हो गया है और जहां चन्द्रमा तारे आदि सभी अस्त हो गए हैं।] यह शिवरात्रि है ज्ञानकी वह दशा जिसमें योगीको अपना शिवरूप भासता है। उसमें सूर्य—अर्थात् प्रकाश करने वाला, ज्ञान कराने वाला प्रत्यक्षादि प्रमाण भी अस्त हो गया है। क्योंकि उस समय शिव ही शिव प्रकाशित होता है। उस शिवका प्रकाश प्रत्यक्षादिसे नहीं हो सकता है; क्योंकि उस शिवके ही प्रकाशसे प्रत्यक्षादि प्रमाण स्वयं प्रकाशित होते हैं। सूर्यसे प्रकाशित होने वाले चन्द्रादि अर्थात् प्रमाणसे प्रकाशित होने वाले प्रमेय भी उस समय समस्त अस्त हो जाते हैं। क्योंकि उस अवस्थामें शिवके अतिरिक्त कोई दूसरी वस्तु भासती ही नहीं। शिव प्रकाशमय है इस कारण वह शिवसमावेश दशा अपने प्रकाशसे ही भास्वर है। यहां सूर्य शब्दसे मुख्य प्राण और चन्द्रादिसे अपानादि अथवा चक्षुरादि इन्द्रियां भी अभिप्रेत हो सकती हैं। क्योंकि मुख्य प्राणकी ही शक्तिसे इन सबमें शक्ति आ जाती है। आचार्यका दूसरा पद्य यह है—

ज्योतिरस्ति कथयापि न किञ्चिद्
विश्वमप्यतिसुषुप्तमशेषम्।
यत्र नाथ! शिवरात्रिपदेऽस्मिन्
नित्यमर्चयति भक्तजनस्त्वाम्॥
(शि० स्तो०)

अर्थात्—हे नाथ! आपको भक्तजन उस शिवरात्रिमें नित्य पूजा करते हैं, जिसमें ज्योतिका तो नाम भी नहीं होता और समस्त विश्व भी जिसमें बहुत गाढ़ निद्रामें सोया हुआ होता है। ज्योतिका यहां अर्थ है बाह्य तथा मानस ज्ञान। उसका तो शिव समावेशकी दशामें नाम भी नहीं होता है। क्योंकि शिवके प्रकाशके सामने करण निस्तेज हो जाते हैं। जैसे सूर्यके प्रकाशके सामने ग्रह निस्तेज हो जाते हैं। उस दशामें मायाकी भी कुछ नहीं चलती। इस कारण मायासे बना हुआ यह सारा विश्व भी उस समय जागता नहीं अर्थात् प्रकाशित नहीं होता है। क्योंकि केवल शिव ही उस समय चमकता है। ऐसी शिवरात्रिमें शिवके साथ एकताकी प्रतीति अर्थात् मैं शिव हूँ यह प्रतीति ही शिवकी पूजा है। इस पूजा को केवल भक्तजन ही कर सकते हैं। यह कविका अभिप्राय है।

इस भावनासे भक्तिपूर्वक शिवरात्रिकी उपासना हम सबको करनी चाहिये, जिससे हम भी कभी शिवरात्रिका पूर्ण आनन्द प्राप्त कर सकें। अब शेष रहती है शिवरात्रिके समयकी विवेचना उसे हम अपने ज्योतिष जानने वाले मित्रों पर छोड़ देते हैं।

शिव प्रशस्ति

[विद्याभूषण श्री पं० मोहन शर्मा, विशारद, भूतपूर्व सम्पादक 'मोहिनी']

वह जो सुन्दर परिधेय श्वेत गजके चर्म्मको कटिदेशमें पहिने, उन्नत और विशाल ललाटमें नवीन इन्दुकला धारण किये हुये हैं, जिनके जटाजूटसे रजत-रेखाके समान गंगधार सरीसृप गतिसे सदा सर्वदा प्रवाहित हो रही है, मादक द्रव्य सेवनसे जिनके नयन-युगल अरुणोदयकी शुभ्र छटाके सदृश आरक्तिम हो उठते हैं, धवल-धतूरा जिन्हें अति प्रिय जान पड़ता है, नर-कङ्कालकी गल-माल जिनके ग्रीवा में शोभायमान हो रही है, विश्व द्वारा परित्यक्त श्मशान-भूमिकी भस्म जिनके देव-दुर्लभ गातसे लिपटकर धन्य २ हो रही है—मैं उन्हींका एक क्षुद्र दासानुदास ऐसे दीर्घाकृति सौम्यदृष्टि, सौम्य मूर्तिमान, रजतगिरिके समान भूतभावन भगवान् भूतेश्वर देवाधिदेवके पद पङ्कजोंमें श्रद्धा भक्तिसे तन्मय होकर अपना मस्तक झुकाता हूं।

हिमालयकी पवित्रतम हिममण्डित धरतीमें देव-दारु वृक्षोंके नीचे महामहिमशाली रुद्र भगवान् जब इतस्ततः विचरण करते हैं तब किसी २ स्फटिक शिलाकी वक्षस्थली में उनके चरण-चिह्न चिरकाल के लिये अङ्कित हो जाते हैं। और तब मानस सरोवर की ओर विचरते हुये राजहंस तथा विहङ्ग गण सिद्ध मुनियों द्वारा सेव्य उन पावन पाद चिह्नोंको अपलक नेत्रोंसे देख आत्म-विभोर हो उठते हैं। उनके सौभाग्योदयके इस सुनहले प्रभातका शब्दों द्वारा तो क्या आंसुओं द्वारा भी वर्णन नहीं हो सकता। हममें यदि उड़नेकी क्षमता रहती तो आकाश मार्गसे वहां जाकर उन पद चिह्नों पर इस बोझल मस्तकको एक बार ही झुका देते और जिससे कि हमारी समस्त ऐहिक और पारलौकिक एषणाओंका एकान्त रूपसे शमन हो जाता।

मृत्युञ्जय भगवान् जब कभी विश्वमूलमें आत्मस्थ होते हैं तब समग्र सृष्टिका राग रंग सहसा निष्प्रभ हो जाता है। तब वायु निश्चल हो रहती है, वृक्ष निष्कम्प हो जाते हैं, खण्ड चन्द्र भी अपनी प्रभा-मर्यादा त्याग देता है, जटाजूट-लीना माता गङ्गा शब्द हीना हो उठती हैं। केवल शैल-सुता गौरी माता ही तब इस दुर्दृश्यको निरखती रहती हैं और देख-देख कर भी भगवान्के उस समयके रूपको देखनेकी साध नहीं मिटा पातीं।

त्रिनेत्रधारी त्रिशूल-पाणि भगवान् शंकर कभी २ हिमालयमें अन्यमनस्क होकर दण्डायमान अवस्थामें पाये जाते हैं। तब उनका दिगन्त-विस्तृत विराट-वपु देख कर ऐसा भासित होता है मानो मेघ रूपी जल-धारा कर्पूर गिरिसे संलग्न हो गयी हों। तब उनका ईषत्-कपिश केश-जाल अस्त सूर्यकी रक्तिम किरणोंसे उद्भासित हो उठता है। ललाटका अर्द्ध-चन्द्र ध्रुव तारे के समान जाज्वल्यमान दिखाई देता है और कल-कण्ठमें शोभायमान फणि समूहका मणि मण्डल आगन्तुकको अन्धकारके भयानक मार्गमें दीप-महोत्सवकी प्रदीप मालाकी भांति नयनानन्ददायक हो जाता है।.........इसी रूपसे विश्व-रूपका प्रादुर्भाव होता है। हे! नील-लोहित! विराट-वपुधारी जगन्निवास! तुम्हारे इस विश्वव्यापी वरेण्य स्वरूपको निरख कर कौन ऐसा है जो तृप्त नहीं होगा? तुम्हारे इन पावन पदाम्बुजोंमें मेरा शत कोटि प्रणाम है! "नमो भवाय नित्याय शिवाय च!"

यद्यपि ये ही रजतगिरिके समान देहधारी देवाधि-देव अतीव सौम्य और सौम्यादपि सौम्य माने गये हैं। तथापि प्रलयकालमें इन्हींके ललाटसे लुप्त तृतीय नेत्रके प्रकट होते ही विश्वविनाशी लीलाका आरम्भ हो जाता है। एवं पलक उघाड़ते ही सृष्टि ध्वंसको प्राप्त हो रहती है। उस दिन भगवान्के फहराते हुये जटाजूटोंसे अग्नि शिखायें दिगन्त व्यापी ताण्डवका दृश्य उपस्थित कर देती हैं। दिगन्तरमें सघन कृष्ण-

मेघोंके ऊपर मानो दावानलकी दीप्ति प्रतिबिम्बित हो रही हो—ऐसा भयंकर और हृदय विकम्पी दुर्दृश्य तब भगवान्‌के लीलाविलासकी असीम सत्ताको व्यक्त करने वाला होता है। तब माता गङ्गा निदाघ-तापित तटिनीके समान शुष्क होकर अन्तर्हिता हो जाती हैं। और गल लम्बित मणि शिर फणि माला दिनकर-कर-कर्षिता पद्मिनीकी भांति म्रियमाण हो उठती है। उस दिन भगवान् शंकर स्वकर स्थित शूल द्वारा दिग् दिगन्तको वेधकर सप्त ब्रह्माण्डोंको चूर्ण विचूर्ण कर देते हैं। तब ग्रह-उपग्रह-सङ्कुल सौर-मण्डलका आत्यन्तिक विनाश एक निमेष मात्रमें ही साधित होता है। इस प्रकार सृष्टिका विध्वंस कर भगवान् अनन्त शून्य महाव्योममें अलक जालको उड़ाते हुये ताण्डव नृत्य करने लग जाते हैं। कोटि २ कल्प व्यतीत होने पर भी यह नृत्य अपनी परिसमाप्तिको नहीं पहुंचता। सहसा एक दिन भगवान्‌के मन मानस में यह ध्वनि तरंगित हो उठती है "अहं बहुस्याम्" और बस इसी इच्छाके वश वे आत्म-संवरण करके पुनर्वार विश्व-मूलमें प्रकृतिस्थ होते हैं। फिर सृष्टि पुनरुज्जीविता होती है। संसार उजड़ा हुआ पुनः बसने लग जाता है। विकट संहारके उपरान्त फिर सृजन-हार सृष्टि लीला दिखाते हैं।

अन्तमें हे सौम्य! हे रौद्र!! हे पृथूकीर्त्ति!!! आपने मेरे मानस-मन्दिरमें सातिशय अधिकार धारण किया है। आपके महात्म्यकी वाणी द्वारा स्तुति नहीं हो सकती। आपको मेरा कोटिशः प्रणाम है। जिस प्रकार समग्र वर्णोंके समुच्चय स्वरूप शुभ्र वर्णकी महिमा है उसी प्रकार समस्त देवोंके ऐश्वर्य समन्वय स्वरूप आपके लावण्यका महात्म्य है। ॐ नमः शिवाय।

होलिका दहन और उसका परिणाम

इस वर्ष फाल्गुन शु० १५ रविवार ता० २१ मार्च १६४३ को सन्ध्या समयके अनन्तर रात्रिके ८ बजे (वर्धित स्टेण्डर्ड टाइम नौ बजे) के उपरान्त होलिका-दाहका मुहूर्त शुभ है।

गताङ्कमें हमने रविवारी दीपमालिकाके अनिष्ट परिणामकी सूचना दी थी, उसका प्रत्यक्ष अनुभव पाठकोंको हो ही रहा है। आगे यह होलिका भी रविवारमें आ रही है, इसका अनिष्ट प्रभाव दीपमाला से भी बढ़कर होने वाला है। अर्थात् यह होली समस्त संसारके लिए महान् हानिकारक होली ही सिद्ध होगी। अनेक प्रकारके उत्पातोंसे संसार संत्रस्त हो उठेगा। भड्डलीमें इसका फल यों लिखा है—

रवि मङ्गल शनि होली आवे।
डंक कहे मोहे फागुन भावे॥
उल्का (अग्निके गोले) पात करे भुव सारी।
घर घर बार रोय नर नारी॥

वायु परीक्षा

पाठकोंको इस वर्ष होलिका दाहके समय वायु-परीक्षा अवश्य करनी चाहिए। यदि भगवान्‌की कृपासे उस समय जिस देशमें पूर्व उत्तर या ईशान की वायु चलेगी उस देशमें अनिष्ट परिणाम बहुत अंश में निवृत्त हो जावेगा और जिन देशोंमें इनसे भिन्न दिशाकी वायु चलेगी उन देशोंका रक्षक ईश्वर ही है।

वायुका फल

होली जलनेके समय वायु पूर्वका हो तो राजा-प्रजामें सुख। अग्निकोणका हो तो अग्निका भय। दक्षिणका हो तो दुर्भिक्ष तथा पशुओंकी मृत्यु। नैर्ऋत्यकोणका हो तो टिड्डी आदिका उपद्रव। पश्चिम का हो तो मध्यम सुभिक्ष तथा भेड़ोंकी मृत्यु जिससे ऊन मँहगी। वायव्यकोणका हो तो वायुका उपद्रव। उत्तर वा ईशानकोणका हो तो सम्पूर्ण अन्न (खेतियाँ) उत्पन्न होने योग्य श्रेष्ठ वर्षा। यदि चारों ही ओरका पवन चले तो सेना (फौज) वा टिड्डीसे राजा प्रजा को कष्ट हो। यदि कदाचित् होलिका दाहके समय वायु बिल्कुल शान्त हो जिससे होलीकी झाल (अग्नि की लपट) सीधी ऊपर आकाशकी ओर जावे तो जगत् कम्पायमान होवे। आशा है विज्ञ पाठक महानु-भाव अपने अपने नगरमें होलिका दाह समयकी वायु परीक्षा अवश्य करेंगे। —सम्पादक।

त्रैमासिक पर्व व्रतादि निर्णय

[लेखक—श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय']

पौष शुक्ल ११ रविवार	ता० १७ जनवरी	पुत्रदा ११ व्रत
,, ,, १२ सोमवार	ता० १८ ,,	सोमप्रदोषव्रत
,, ,, १४ बुधवार	ता० २० ,,	सत्यव्रत
,, ,, १५ गुरुवार	ता० २१ ,,	माघस्नानारम्भ
माघ कृष्ण ४ सोमवार	ता० २५ ,,	श्रीगणेशजयन्ती सङ्कष्ट चतुर्थी तिल ४ व्रत चन्द्रोदय [प्रचलित स्टेण्डर्ड टाईम घं० १० मि० ३० रात्रिमें
,, ,, ११ सोमवार	ता० १ फरवरी	षट्तिला एकादशी व्रत
,, ,, १२ मंगलवार	ता० २ ,,	भौमप्रदोष व्रत
,, ,, १४ गुरुवार	ता० ४ ,,	मौनी अमावस, महोदय पर्व ११ घटी उपरान्त
माघ शुक्ल २ शनिवार	ता० ६ ,,	चन्द्रदर्शन
,, ,, ५ मंगलवार	ता० ९ ,,	वसन्त पञ्चमी श्री ५
,, ,, ७ गुरुवार	ता० ११ ,,	अचलासप्तमी रथसप्तमी
,, ,, ८ शुक्रवार	ता० १२ ,,	कुम्भसंक्रान्ति मु. ३० पुण्यकाल १९ घ. उपरान्त, भीष्म ८
,, ,, ११ सोमवार	ता० १५ ,,	जया एकादशी व्रत
,, ,, १२ मंगलवार	ता० १६ ,,	भीष्मद्वादशी
,, ,, १३ बुधवार	ता० १७ ,,	प्रदोष व्रत
,, ,, १३ गुरुवार	ता० १८ ,,	गुरुपुष्य योग
,, ,, १४ शुक्रवार	ता० १९ ,,	सत्यव्रत
,, ,, १५ शनिवार	ता० २० ,,	माघी १५ माघस्नान समाप्ति
फाल्गुन कृष्ण ३ मंगलवार	ता० २३ ,,	श्रीगणेशचतुर्थी व्रत
,, ,, ८ रविवार	ता० २८ ,,	श्रीसीताजन्माष्टमी
,, ,, ११ मंगलवार	ता० २ मार्च	विजया एकादशी व्रत
,, ,, १३ गुरुवार	ता० ४ ,,	श्रीमहाशिवरात्रि १४ व्रत प्रदोष व्रत
,, ,, ३० शनिवार	ता० ६ ,,	शनैश्चरी अमावस
फाल्गुन शुक्ल १ रविवार	ता० ७ ,,	चन्द्रदर्शन. [*होलाष्टकारम्भ
,, ,, ८ रविवार	ता० १४ ,,	मीन संक्रान्ति मु० ३० पुण्यकाल २४ घटी उपरान्त,*
,, ,, ११ बुधवार	ता० १७ ,,	आमला एकादशी व्रत
,, ,, १३ शुक्रवार	ता० १९ ,,	प्रदोष व्रत
,, ,, १५ रविवार	ता० २१ ,,	होलिकादाह हुताशनीजन्म सत्यव्रत
चैत्र कृष्ण १ सोमवार	ता० २२ ,,	वसन्तोत्सव होलिकाभस्मधारण आम्रपुष्पप्राशन धुलेंडी, श्वपच स्पर्श

चैत्र कृष्णा	४ गुरुवार	ता० २५	मार्च	श्रीगणेशचतुर्थी व्रत
,, ,,	८ सोमवार	ता० २९	,,	श्रीशीतलाष्टमी शीतलापूजन
,, ,,	११ गुरुवार	ता० १	अप्रैल	पापमोचनी एकादशी व्रत
,, ,,	१२ शुक्रवार	ता० २	,,	प्रदोष व्रत
,, ,,	१४ शनिवार	ता० ३	,,	चैत्रचतुर्दशी
,, ,,	३० रविवार	ता० ४	,,	अमावस्या
चैत्र शुक्ल	१ सोमवार	ता० ५	,,	चान्द्रसँव्वत्सर शक १८६५(सं० २०००) आरम्भ नवरात्रारम्भ तैलाभ्यङ्ग घटस्थापन, श्रीमहर्षि गौतमजयन्ती
,, ,,	२ मंगलवार	ता० ६	,,	चन्द्रदर्शन
,, ,,	३ बुधवार	ता० ७	,,	गणगौरीपूजन मत्स्यजयन्ती
,, ,,	८ मंगलवार	ता० १३	,,	मेष संक्रान्ति मु० ३० पुण्यकाल दूसरे दिन, भवान्युत्पत्ति श्रीदुर्गाष्टमी मध्याह्नव्यापिनी श्रीराम ९ स्मा०
,, ,,	९ बुधवार	ता० १४	,,	श्रीराम ९ व्रत, दुर्गा ९

महापुरुषोंकी जयन्तियां, निर्वाण-दिन और प्रसिद्ध मेले

माघ कृष्णा	७ गुरुवार	ता० २८	जनवरी	श्रीरामानन्द जयन्ती
,, ,,	१४ गुरुवार	ता० ४	फरवरी	मौनी अमावस महोदयपर्व मेला प्रयागराज
,, शु०	१४ शुक्रवार	ता० १९	,,	स्वर्गीय श्री गोखले पुण्यदिन
फाल्गुन कृष्णा	८ रविवार	ता० २८	,,	समर्थ श्री रामदास पुण्यदिन
,, शु०	२ सोमवार	ता० ८	मार्च	श्री परमहंस रामकृष्ण जयन्ती
,, ,,	१५ रविवार	ता० २१	,,	महाप्रभु श्रीकृष्ण-चैतन्य जयन्ती
चैत्र कृष्णा	१ सोमवार	ता० २२	,,	मेला आनन्दपुर साहिब (पंजाब)
,, ,,	३ बुधवार	ता० २४	,,	भक्त श्री तुकाराम पुण्यदिन
,, ,,	६ शनिवार	ता० २७	,,	श्री एकनाथ महाराज पुण्यदिन
,, ,,	११ गुरुवार	ता० १	अप्रैल	शुद्धाद्वैताचार्य श्रीवल्लभ जयन्ती
,, ,,	१४ शनिवार	ता० ३	,,	मेला पृथूदक पिहोवा (कुरुक्षेत्र)
,, शुक्ल	८ मंगलवार	ता० १३	,,	मेला वैशाखी और मेला श्रीमनसादेवी मनीमाजरा

छुट्टियां हाईकोर्ट पंजाब और युक्तप्रान्त

मुहर्रम (ताजिया)— ता० १५ से १७ जनवरी शुक्रसे रविवार तक
मौनी अमावस— ता० ४ फरवरी गुरुवार
वसन्तपञ्चमी— ता० ९ ,, मंगलवार
उरस दातागंजबख्श— ता० २५ फरवरी गुरुवार
आखरी चहार शम्बा— ता० ३ मार्च बुधवार
शिवरात्रि— ता० ४ मार्च गुरुवार
ईदुल्लमिल्लाद— ता० १९ मार्च शुक्रवार
होली— ता० २१ मार्च रविवार
होला— ता० २२ मार्च सोमवार
आठोंका मेला— ता० २८-२९ मार्च रवि सोमवार
दुर्गाष्टमी— ता० १३ अप्रैल मंगलवार
वैशाखी— ता० १३ ,, ,,
रामनवमी— ता० १४ अप्रैल बुधवार

स्वाध्याय-पत्र-प्रशंसा

[लेखक—राजकुमारगुरु ज्यौतिषालङ्कार विद्याभूषण श्री पं० तारादत्त जी राज ज्यौतिषी]

[ये कविताएँ यद्यपि 'श्रीस्वाध्याय' पत्र तथा उसके सम्पादककी प्रशंसामें लिखे जानेके कारण हमें स्वयं प्रकाशित करना अकचका-सा जान पड़ता है, तथापि विद्वान् कवयिताके हार्दिक प्रेमकी उपेक्षा करना हमें अनुचित प्रतीत हुआ इस कारण इन कविताओंको यहां प्रकाशित किया जारहा है। —सम्पादक]

[१]

हरेण देवेन सशङ्कभावं
हर्तुं स्वनाम्नैव विभूषितो यः।
स्वाध्यायपत्रं हरदेव विप्रः
सम्पादयत्युत्तम कर्मणैव ॥

श्रीदेवहरने हरनेको शङ्का
जिन्हें सजाया निज नामसे ही।
करते हैं निर्मित हरदेव विप्र
स्वाध्यायको उत्तम कामसे ही ॥

[२]

शास्त्राभिधं सन्मतिमन्दरेण
प्रमथ्य सिन्धुं हि निबन्धरूपः।
सतां सुधौघो निहितो गणेन
सत्पत्रपात्रेऽतिसुखाय पाने ॥

रखा सुधी-मन्दरसे जो मथकर
शास्त्राब्धिको पत्र-सुपात्रमें है।
सत्संघने लेख-सुधा-समूह
अत्यन्त देता सुख पानमें है ॥

[३]

एतत्सुधापानत एव शक्ति-
मवाप्य कामं सकलो बुधौघः।
जयत्वबोधाभिधदैत्यसंघं
नास्तिक्यहेतुं बहुगर्ह्यशीलम् ॥

पाकर बड़ी शक्ति इसी सुधाके
पीनेसे जीते सब धीर संघ।
अज्ञानरूपी अतिनिन्द्य शील
नास्तिक्यका कारण दैत्य संघ ॥

[४]

अधर्मलेशं निखिलं विहाय
गायन्तु नित्यं यश एव शम्भोः।
विहाय सर्वाणि जगद्भयानि
धामोत्तमं यान्तु महेश्वरस्य ॥

अधर्मका लेश सभी हटाकर
महेशका ही यश नित्य गावें।
सभी भयोंको जगके हटाकर
महेशका उत्तम धाम पावें ॥

त्रैमासिक ग्रहयोग-प्रतियोग चमत्कार

[लेखक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी]

बुध शुक्र युतिः ता० १७ जनवरी	मङ्गल गुरु प्रतियोग ता० १७ फरवरी
सूर्य बुध युतिः ता० २४ ,,	बुध राहु ,, ,, ७ मार्च
शुक्र राहु प्रतियोग ता० २६ जनवरी	सूर्य बुध युतिः ,, ४ अप्रैल
सूर्यराहु ,, ,, १४ फरवरी	मङ्गल राहु प्रतियोग ,, ७ अप्रैल

इन तीन मासोंमें विशेष महत्त्वका योग प्रतियोग कोई नहीं है। जो साधारण हैं उनका इष्टानिष्ट परिणाम (फल) "दैवज्ञकी दृष्टिमें संसारचक्र" शीर्षक लेखमें अन्तर्हित कर दिया है। पाठक उस लेखको अवश्य पढ़लें।

ग्रहोंके साथ चन्द्रमाका समागम और दृष्टियोग

जनवरी मासमें—

ता० १५ चं० बु० केन्द्र
,, चं० गु० तृतीयैकादश
,, चं० मं० षडष्टक
१६ चं० सू० त्रिकोण
,, चं० रा० केन्द्र
१७ चं० श० युतिः
,, चं० ह० युतिः
,, चं० बु० त्रिकोण
,, चं० शु० त्रिकोण
१८ चं० गु० द्विर्द्वादश
,, चं० मं० प्रतियोग
,, चं० रा० तृतीयैकादश
,, चं० सू० षडष्टक
१९ चं० श० द्विर्द्वादश
,, चं० बु० षडष्टक
२० चं० शु० षडष्टक
,, चं० गु० युतिः
२१ चं० मं० षडष्टक
,, चं० रा० द्विर्द्वादश
,, चं० सू० प्रतियोग
२२ चं० श० तृतीयैकादश

ता० २२ चं० बु० प्रतियोग
२३ चं० शु० प्रतियोग
,, चं० गु० द्विर्द्वादश
,, चं० रा० युतिः
,, चं० मं० त्रिकोण
२४ चं० सू० षडष्टक
,, चं० बु० षडष्टक
,, चं० श० केन्द्र
२५ चं० गु० तृतीयैकादश
,, चं० शु० षडष्टक
२६ चं० रा० द्विर्द्वादश
,, चं० मं० केन्द्र
,, चं० बु० त्रिकोण
२७ चं० श० त्रिकोण
,, चं० सू० त्रिकोण
२८ चं० गु० केन्द्र
,, चं० शु० त्रिकोण
,, चं० रा० तृतीयैकादश
,, चं० बु० केन्द्र
२९ चं० मं० तृतीयैकादश
,, चं० श० षडष्टक
,, चं० सू० केन्द्र

ता० ३० चं० गु० त्रिकोण
,, चं० रा० केन्द्र
,, चं० बु० तृतीयैकादश
,, चं० शु० केन्द्र
३१ चं० मं० द्विर्द्वादश
,, चं० श० प्रतियोग
,, चं० सू० तृतीयैकादश

फरवरी मासमें—

ता० १ चं० गु० षडष्टक
,, चं० रा० त्रिकोण
२ चं० बु० द्विर्द्वादश
,, चं० शु० तृतीयैकादश
,, चं० मं० युतिः
,, चं० श० षडष्टक
३ चं० सू० द्विर्द्वादश
,, चं० गु० प्रतियोग
,, चं० बु० युतिः
,, चं० रा० षडष्टक
४ चं० शु० द्विर्द्वादश
,, चं० श० त्रिकोण
,, चं० मं० द्विर्द्वादश
५ चं० सू० युतिः

ता० ५ चं० गु० षडष्टक
,, चं० बु० द्विर्द्वादश
,, चं० रा० प्रतियोग
६ चं० श० केन्द्र
,, चं० शु० युतिः
,, चं० मं० तृतीयैकादश
७ चं० गु० त्रिकोण
,, चं० सू० द्विर्द्वादश
,, चं० बु० तृतीयैकादश
,, चं० रा० षडष्टक
८ चं० श० तृतीयैकादश
,, चं० शु० द्विर्द्वादश
,, चं० मं० केन्द्र
९ चं० गु० केन्द्र
,, चं० सू० तृतीयैकादश
१० चं० रा० त्रिकोण
,, चं० बु० केन्द्र
,, चं० श० द्विर्द्वादश
११ चं० मं० त्रिकोण
,, चं० शु० तृतीयैकादश
,, चं० गु० ,,
१२ चं० सू० केन्द्र
,, चं० रा० ,,
,, चं० बु० त्रिकोण
१३ चं० श० युतिः
,, चं० मं० षडष्टक
१४ चं० शु० केन्द्र
,, चं० गु० द्विर्द्वादश
,, चं० सू० त्रिकोण
,, चं० रा० तृतीयैकादश
१५ चं० बु० षडष्टक
,, चं० श० द्विर्द्वादश
१६ चं० मं० प्रतियोग
,, चं० गु० युतिः
१७ चं० शु० त्रिकोण
,, चं० रा० द्विर्द्वादश

ता० १७ चं० सू० षडष्टक
१८ चं० बु० प्रतियोग
,, चं० श० तृतीयैकादश
१९ चं० गु० द्विर्द्वादश
,, चं० मं० षडष्टक
,, चं० शु० ,,
,, चं० रा० युतिः
२० चं० सू० प्रतियोग
,, चं० बु० षडष्टक
,, चं० श० केन्द्र
२१ चं० गु० तृतीयैकादश
,, चं० मं० त्रिकोण
२२ चं० रा० द्विर्द्वादश
,, चं० ने० युतिः
,, चं० शु० प्रतियोग
२३ चं० सू० षडष्टक
,, चं० श० त्रिकोण
,, चं० बु० ,,
२४ चं० गु० केन्द्र
,, चं० मं० ,,
,, चं० रा० तृतीयैकादश
२५ चं० शु० षडष्टक
,, चं० सू० त्रिकोण
,, चं० श० षडष्टक
,, चं० बु० केन्द्र
२६ चं० गु० त्रिकोण
,, चं० मं० तृतीयैकादश
,, चं० रा० केन्द्र
२७ चं० शु० त्रिकोण
,, चं० श० प्रतियोग
,, चं० सू० केन्द्र
२८ चं० बु० तृतीयैकादश
,, चं० गु० षडष्टक

मार्च मासमें—

ता० १ चं० श० त्रिकोण
,, चं० मं० द्विर्द्वादश

ता० १ चं० शु० केन्द्र
२ चं० श० षडष्टक
,, चं० सू० तृतीयैकादश
,, चं० गु० प्रतियोग
,, चं० बु० द्विर्द्वादश
३ चं० रा० षडष्टक
,, चं० मं० युतिः
४ चं० श० त्रिकोण
,, चं० शु० तृतीयैकादश
,, चं० सू० द्विर्द्वादश
,, चं० गु० षडष्टक
५ चं० बु० युतिः
,, चं० रा० प्रतियोग
,, चं० मं० द्विर्द्वादश
६ चं० श० केन्द्र
,, चं० शु० द्विर्द्वादश
,, चं० सू० युतिः
,, चं० गु० केन्द्र
७ चं० बु० द्विर्द्वादश
,, चं० रा० षडष्टक
,, चं. मं. तृतीयैकादश
८ चं. श. ,,
,, चं. शु. युतिः
,, चं. गु. केन्द्र
,, चं. सू. द्विर्द्वादश
९ चं. रा. त्रिकोण
,, चं. बु. तृतीयैकादश
,, चं. मं. केन्द्र
१० चं. श. द्विर्द्वादश
११ चं. गु. तृतीयैकादश
,, चं. शु. द्विर्द्वादश
,, चं. सू. तृतीयैकादश
,, चं. रा. केन्द्र
१२ चं. बु. ,,
,, चं. मं. त्रिकोण
,, चं. हृ. युतिः

ता० १२ चं. श. युतिः
१३ चं. गु. द्विर्द्वादश
,, चं. शु. तृतीयैकादश
१४ चं. सू. केन्द्र
,, चं. रा. तृतीयैकादश
१५ चं. मं. षडष्टक
,, चं. बु. त्रिकोण
,, चं. श. द्विर्द्वादश
,, चं. गु. युतिः
१६ चं. शु. केन्द्र
,, चं. रा. द्विर्द्वादश
,, चं. सू. त्रिकोण
,, चं. मं. प्रतियोग
१७ चं. श. तृतीयैकादश
१८ चं. बु. षडष्टक
,, चं. गु. द्विर्द्वादश
१९ चं. रा. युतिः
,, चं. शु. त्रिकोण
,, चं. सू. षडष्टक
२० चं. श. केन्द्र
,, चं. मं. षडष्टक
,, चं. गु. तृतीयैकादश
२१ चं. बु. प्रतियोग
,, चं. रा. द्विर्द्वादश
,, चं. ने. युतिः
२२ चं. शु. षडष्टक
,, चं. सू. प्रतियोग
,, चं. श. त्रिकोण
,, चं. मं. ,,
२३ चं. गु. केन्द्र
,, चं. बु. षडष्टक
,, चं. रा. तृतीयैकादश
२४ चं. शु. प्रतियोग
,, चं. सू. षडष्टक
,, चं. श. ,,
२५ चं. मं. केन्द्र

ता० २५ चं. गु. त्रिकोण
२६ चं. रा. केन्द्र
,, चं. बु. त्रिकोण
२७ चं. सू. ,,
,, चं. शु. षडष्टक
,, चं. श. प्रतियोग
,, चं. मं. तृतीयैकादश
,, चं. गु. षडष्टक
२८ चं. रा. त्रिकोण
,, चं. बु. केन्द्र
२९ चं. सू. ,,
,, चं. श. षडष्टक
,, चं. मं. द्विर्द्वादश
,, चं. शु. त्रिकोण
,, चं. गु. प्रतियोग
३० चं. रा. षडष्टक
३१ चं. बु. तृतीयैकादश
,, चं. श. त्रिकोण
,, चं. शु. केन्द्र
,, चं. सू. तृतीयैकादश

अप्रैल मासमें—

ता. १ चं. गु. षडष्टक
,, चं. मं. युतिः
,, चं. रा. प्रतियोग
२ चं. श. केन्द्र
,, चं. बु. द्विर्द्वादश
,, चं. सू. ,,
३ चं. शु. तृतीयैकादश
,, चं. गु. त्रिकोण
,, चं. मं. द्विर्द्वादश
,, चं. रा. षडष्टक
४ चं. श. तृतीयैकादश
५ चं. सू. युतिः
,, चं. बु. ,,
,, चं. गु. केन्द्र

ता० ५ चं. शु. द्विर्द्वादश
,, चं. मं. तृतीयैकादश
,, चं. रा. त्रिकोण
६ चं. श. द्विर्द्वादश
७ चं. गु. तृतीयैकादश
,, चं. सू. द्विर्द्वादश
,, चं. बु. ,,
,, चं. शु. युतिः
,, चं. मं. केन्द्र
८ चं. रा. ,,
९ चं. श. युतिः
,, चं. गु. द्विर्द्वादश
१० चं. सू. तृतीयैकादश
,, चं. रा. ,,
,, चं. शु. द्विर्द्वादश
,, चं. मं. त्रिकोण
,, चं. बु. तृतीयैकादश
११ चं. श. द्विर्द्वादश
१२ चं. गु. केन्द्र
,, चं. सू. ,,
,, चं. रा. द्विर्द्वादश
१३ चं. मं. षडष्टक
,, चं. शु. तृतीयैकादश
,, चं. बु. केन्द्र
१४ चं. श. तृतीयैकादश
,, चं. गु. द्विर्द्वादश
१५ चं. रा. युतिः
,, चं. सू. त्रिकोण
,, चं. मं. प्रतियोग
,, चं. शु. केन्द्र
१६ चं. बु. त्रिकोण
,, चं. श. केन्द्र
१७ चं. गु. तृतीयैकादश
,, चं. रा. द्विर्द्वादश
१८ चं. सू. षडष्टक
,, चं. मं. ,,

श्रीराम-नवमी

"नवमी तिथि क्यों हुई राम अवतारमें ?"

[लेखक—श्री पं० लक्ष्मीदत्तजी कथावाचक महोपदेशक कीर्तन-कलानिधि]

॥ शंका ॥

जप तप योग याग, शुभ काम और राग,
पठन पाठन और सब व्यवहारमें ।
विवाह उत्साहमें मनाह किया रिक्ताको,
कहीं नहीं माना इसे षोडश संस्कारमें ॥
यात्रा विदेशमें और सुन्दर उपदेशमें,
जगत संदेशमें औ बनज व्यापारमें ।
लक्ष्मीदत्त नवमी रिक्ता कर छोड़ी जब,
फिर क्यों ये तिथि लीनी राम अवतारमें ? ॥१॥

॥ उत्तर ॥

प्रथम ब्रह्माण्डके बनाये नवखण्ड[१] देखो,
फिर रची यह देही नव हीके द्वारमें[२] ।
नवग्रह[३] नवद्रव्य[४] नवरस[५] नवहव्य[६],
नवदेवी[७] नवनाड़ी[८] वदन आकारमें ॥
नवभक्ति[९] नवशक्ति[१०] नवरत्न[११] नवनिधि[१२],
नवविप्रकर्म[१३] जो विदित नर नारमें ।
लक्ष्मीदत्त नवका महत्त्व सत्य जानकर,
नवमी तिथि यों हुई राम अवतारमें ॥२॥
नवरात[१४] आत हैं सुहात हैं प्रभात साथ,
एक-एक वर्ष जो हैं घूमती दो वारमें ।
नवरस भावके विभाव दरशावने को,
नवनव[१५] सुमन[१६] खिलाती गुलजारमें ॥
निशङ्क अङ्क नव[१७] हैं, कलङ्क बिन जगमें,
व्यापक जैसे राम हैं असार संसारमें ।
लक्ष्मीदत्त पापसे रिकत जान रिक्ताको,
नवमी तिथि यों हुई राम अवतारमें ॥३॥
हरेक नाम गाममें, तीरथ और धाममें,
राजत शुभा शाममें, जो नौके पहारमें[१८] ।
वे ही अवधविहारी, कर[१९] शर[२०] धनुधारी,
भक्तन हितकारी पैदा हुए साकारमें ॥
चैतके महीनेको नगीनेसे जटित जान,
अभिजित योग और शुभ चन्द्रवारमें ।
नौमी[२१], नवमी तिथिको आधार जो अतिथिको,
नवमी तिथि यों हुई राम अवतारमें ॥४॥

---

(१) नवखण्ड ये हैं— कुरु, हिरण्मय, रम्यक, इला, हरि, केतुमान्, भद्राश्व, किन्नर, भारत । (२) नवद्वार ये हैं— दो आंखें, दो कान, दो नाक रन्ध्र, मुख, लिङ्ग, गुदा । (३) नवग्रह ये हैं— रवि, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु । (४) नवद्रव्य ये हैं— पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिग, आत्मा, मन । (५) नवरस ये हैं— शृङ्गार, करुणा, शान्त, रौद्र, वीर, अद्भुत, हास्य, भयानक, वीभत्स । (६) नवहव्य ये हैं—घृत, दुग्ध, नैवेद्य, तिल, यव, तण्डुल, दाख, छुहारा, फलादि । (७) नवदेवी ये हैं— शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कूष्माण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, कालरात्री, महागौरी, सिद्धिदा । (८) नवनाड़ी ये हैं— इड़ा, पिङ्गला, सुषुम्ना, गन्धारी, गजजिह्वा, पूषा, प्रसादा, शनि, शंखिनी । (९) नवभक्ति ये हैं— श्रवण, कीर्तन, स्मरण, चरणसेवन, अर्च्चन, वन्दन, दास्य, सख्य, आत्मनिवेदन । (१०) नवशक्ति ये हैं— ब्रह्माणी, वैष्णवी, रौद्री, माहेश्वरी, नारसिंही, वाराही, इन्द्राणी, कार्तिकी, सर्वमंगला । (११) नवरत्न ये हैं— हीरा, पन्ना, माणिक, नीलम, लहसनिया, गोमेद, मोती, मूंगा, पुखराज । (१२) नवनिधि ये हैं— महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील, खर्व । (१३) नवविप्रकर्म ये हैं— शम, दम, तप, शौच, क्षमा, सरलता, ज्ञान, विज्ञान, आस्तिकता । (१४) नवरात ये हैं— चैत्रशुक्ला और आश्विनशुक्ला प्रतिपदासे नवमी तककी ९ रातें । (१५) नूतन । (१६) पुष्प । (१७) नवअंक ये हैं— १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९ । (१८) नौका पहाड़ा गणना करनेसे नौका नौ ही रहता है । (१९) हाथ । (२०) बाण । (२१) प्रणमामि, अथवा नवमी तिथि ।

त्रैमासिक भविष्य और राशिफल

[लेखक—श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय']

माघमासका भविष्य

ता० १४ जनवरीसे ११ फरवरी १९४३ पर्यन्त संसारमें सर्वत्र भय, अकालवृष्टि, रोगभय, उत्तर-भारतमें शीत अधिक पड़े, वातपित्त ज्वरोपद्रव भी हों। दक्षिण भारतमें कफविकार वृद्धि। घृत, तैल, गुड़, शक्कर, मिर्च, गेहूं और सुवर्णका भाव तेज। यहां मासके आरम्भमें लोह पदार्थ और धान्य संग्रह करनेसे आगे एक मासके अनन्तर पर्याप्त लाभकी सम्भावना है। किसी दूसरे राष्ट्रसे भारतका व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होनेका योग है इससे भारत के व्यापारमें उन्नतिकी सम्भावना है। वायदेके भावोंमें बहुत घटाबढ़ी होगी। म्लेच्छ देशोंमें तथा बिलोचिस्थानके पर्वतीय प्रदेश, गुजरात और पश्चिमोत्तरीय राजस्थानमें उपद्रव होंगे।

माघमासका राशिफल

(ता० १४ जनवरीसे ११ फरवरी पर्यन्त)

मेष—विद्या बुद्धि सम्मान वृद्धि, कार्य व्यग्रता, लोक-प्रीति, सन्तति सुख, नवीन उद्योग का प्रयत्न, स्त्रीकी ओरसे कुछ चिन्ता, राजपक्ष मध्यम।

वृषभ—क्लेश, यात्रामें कष्ट, मस्तक तथा नेत्रोंमें पीड़ा, स्त्री पुत्र कुटुम्ब परिवारमें मनोमालिन्य, स्थलान्तर, वृत्ति या व्यापार व्यवसाय नौकरी आदिमें बाधा या फेरफार।

मिथुन—शत्रु वृद्धि, वृथापवाद, मानसिक क्लेश व्यय अधिक, लाभमें बाधा, पारिवारिक चिन्ता, मासके अन्तमें साधारण लाभ व यश प्राप्तिका योग है।

कर्क—उद्योग धंदा व्यवसाय आदिकी दृष्टिसे यह मास साधारण है। आप्तजनोंकी सहायता, सम्मान, अल्प श्रमसे कार्य सिद्धि और यशः प्राप्ति हो, सङ्कट निवृत्ति, सन्मित्र प्राप्ति।

सिंह—उग्र कार्योंसे द्रव्य प्राप्ति और उनसे समाजमें प्रतिष्ठा, प्रवास, व्यर्थके कार्योंमें समय नष्ट हो और द्रव्यका व्यय भी अधिक होवे। आप्तजन विरोध, शत्रुनाश, गृह भूमि सुख उत्तम।

कन्या—उत्साह वृद्धि, शत्रुनाश, साम्पत्तिक लाभ साधारण, प्रचलित व्यवसाय धन्दा नौकरी या किसी महत्त्वपूर्ण कार्यकी ओर प्रगति, इष्ट मित्र एवं कौटुम्बिक विरोध या आपत्तियोंकी निवृत्ति।

तुला—कार्य व्यवसाय उत्तम, श्रेष्ठ अधिकारी की प्रसन्नता, चित्तमें आनन्द, कोई उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य करना पड़े और उसमें यश मिले, बन्धुओंसे अनबन, लाभ व्यय बराबर।

वृश्चिक—आर्थिक संकट व्ययाधिक्य, स्थितिके अनुसार बहुत सावधानीसे कार्य करना चाहिए। किसी बड़े कार्यमें हाथ डालना भयप्रद है। मासके अन्तमें कुछ अचानक लाभ हो।

धनुः—कुटुम्ब परिवार एवं इष्टमित्रोंकी चिन्ता, शत्रु वृद्धि, यात्रा, राजपक्ष मध्यम, व्यापारसे साधारण लाभ, न्यायालयमें उपस्थित होने का प्रसंग आवे और उसमें हानि होवे। आर्थिक संकट, ऋणग्रस्तता, लोकापवाद।

मकर—कार्य व्यवसायमें प्रगति, अधिकारियों की प्रसन्नता, कौटुम्बिक सुख उत्तम, वात व्याधि, मासके अन्तमें किसी महत्वपूर्ण कार्यसे यश व लाभ प्राप्ति होवे।

कुम्भ—यह मास सावधानीका है अतः किसी कार्यमें हस्तक्षेप नहीं करना । भलाई का परिणाम बुराईमें मिले, अकारण शत्रु उत्पन्न हों, मन चिन्ताग्रस्त रहे, शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम ।

मीन—आत्माभिमानवृद्धि, भृत्यवर्ग या मातुल पक्षसे त्रास चिन्ता उत्पन्न हो, यात्रामें भी कष्ट या चोट लगनेका भय है सावधान रहें । मासका अन्तिम सप्ताह उत्तम है, उसमें इच्छित कार्य बनने लगेंगे ।

फाल्गुनमासका भविष्य

ता० १२ फरवरीसे १३ मार्च पर्यन्त उड़द, मूंग, अरहर, कुलथी, नमक, तैल का भाव तेजीकी ओर रहेगा । गेहूँ, बाजरा, मसूर और कपासका भाव कुछ मन्दीकी ओर रहेगा। देशके शत्रुओंका बल क्षीण होने लगेगा । प्रत्येक वस्तु दुष्प्राप्य होने लगेगी जिससे जनतामें अशान्ति अत्यधिक बढ़ेगी। वस्तु नियन्त्रण कुछ शिथिल पड़ेगा । जनताकी आर्थिक स्थिति और करेन्सी (नोट रेजगारी धातुके छोटे-मोटे सिक्कों) की दशा चिन्ताकारक बनी रहेगी । यहां संसारके किन्हीं दो शक्तिशाली राष्ट्रोंमें ऐक्यकी सम्भावना है जिससे भारतमें भी कुछ शुभाशाकी झलक दिखाई देगी ।

फाल्गुनमासका राशिफल

(ता० १२ फरवरीसे १३ मार्च पर्यन्त)

मेष—चित्तमें आनन्द, कार्य व्यवसायमें उन्नति, वैवाहिक सौख्य, प्रत्येक कार्यमें सफलता, पूर्वार्धकी अपेक्षा उत्तरार्ध विशेष उत्तम है ।

वृषभ—शारीरिक व मानसिक स्थिति अस्वस्थ, लोकमत प्रतिकूल, संकटग्रस्त, उच्छृङ्खलताके कारण इष्टमित्र एवं आप्तजनोंमें अपमानित होना पड़े । गुप्तचिन्ता । कार्यव्यवसायमें दुर्लक्ष्य ।

मिथुन—चित्तमें अत्यन्त व्यग्रता, आर्थिक संकट एवं सांसारिक आपत्तियोंके कारण चित्त विक्षिप्तसा हो उठे, क्षणक्षणमें विचार परिवर्तन हो, पारतन्त्र्यके कारण प्रत्येक कार्यमें औदासिन्य ।

कर्क—प्रचलित कार्य व्यवसायमें सन्ताप, अनेक प्रकारकी सांसारिक बाधाओंका साम्मुख्य करना पड़े, भृत्यवर्ग एवं सहवासियोंसे कष्ट, बिना लाभके निरर्थक कामोंमें समय अधिक नष्ट हो ।

सिंह—कल्पित कार्य सिद्धिमें विलम्ब, प्रवास, परिश्रमके अनुकूल उसका परिणाम न मिले । विश्रान्ति (आराम) बिल्कुल न मिले, साम्पत्तिक कष्ट, व्ययाधिक्य, मानसिक अशान्ति, घरमें विवाद ।

कन्या—स्वयंकी तथा स्त्रीके स्वास्थ्यकी ओरसे चिन्ता । यह मास प्रत्येक दृष्टिसे त्रासदायक है । कार्य व्यवसाय मध्यम, धार्मिक कार्योंमें अनास्था, पारिवारिक चिन्ता, आर्थिक लाभ और सम्मानकी दृष्टिसे मासका पूर्वार्ध कुछ अच्छा है ।

तुला—स्थलान्तर, प्रवास, उद्योग एवं पर्याप्त परिश्रम करने पर भी सफलता न मिले, कार्य व्यवसायमें स्थिरता, पारिवारिक सुख मध्यम, नये कार्यसे हानि, चिन्ता वृद्धि ।

वृश्चिक—परिवारके वृद्धजनोंको या माताको कष्ट, दुःखदाई वार्ता या वियोग, स्वयंकी तथा स्त्रीकी प्रकृति अस्वस्थ, जहां तहां विरोधी लोगोंसे अपमान हो, ऋणग्रस्तता तथा वृथा आरोप ।

धनुः—द्रव्यका आय व्यय बहुत हो, सञ्चय न हो, पारिवारिक सुख मध्यम, स्वजनोंका विरोध, रोग भय, यात्राका विचार, मानसिक क्लेश ।

मकर—स्थावर सम्पत्ति गृह भूमि आदिकी चिन्ता, स्वजन एवं व्यसनी लोगोंसे क्लेश, पारिवारिक जनोंमें हीनत्व, लोकमत प्रतिकूल, कार्यमें अत्यन्त परिश्रम करने पर भी फल अनुकूल न हो ।

कुम्भ—चित्तवृत्ति शान्त स्वस्थ, जनता या अधिकारियोंका पूर्ण सहयोग न मिलनेसे कुछ कार्योंमें बाधा पड़ेगी वह मासके अन्तमें निवृत्त होगी ।

निर्भयता पूर्वक कार्यक्षेत्रमें डटे रहनेसे प्रतिष्ठा वृद्धि होगी।

मीन—विद्याभ्यासमें उन्नति, नौकरीमें अचानक अधिकार प्राप्ति, लाभ उत्तम,संतति सुख, चित्तमें आनन्द, व्यापार तथा राज्यपक्षमें द्रव्य व्यय, व्ययाधिक्य, पारिवारिक सुख उत्तम, महत्त्वके कार्यमें यशः प्राप्ति, मित्रमण्डलके विरोधसे कष्ट।

चैत्रमासका भविष्य

ता० १४ मार्चसे १३ अप्रैल पर्यन्त सेनानायकों को कष्ट, बालवर्ग तथा उद्योगी लोगोंको पीड़ा। वायुभय, क्षुधा-शस्त्र-रोगयुद्धादि भय। तैल, घृत, गुड़ादि रस पदार्थ और गेहूंका भाव तेज हो। यहां श्रवणनक्षत्रमें मङ्गल आया है अतः गेहूँमें विशेष तेजी होगी। मध्य पूर्वी-एशिया और यूरोपमें महायुद्ध की ज्वाला भीषण रूपमें धधकने लगेगी। भारत पर भी पूर्व दक्षिणकी ओरसे भीषण आक्रमणकी सम्भावना है। पूर्वी राष्ट्रोंकी नवीन प्रगतिके कारण भारतीय-वाणिज्य-व्यवसायमें कई परिवर्तन होते रहेंगे, जिससे कई वस्तुके भावोंमें सहसा घटाबढ़ी होगी और व्यापारियोंको अकल्पित लाभ हानियां उठानी पड़ेंगी। अतः यहां व्यापारियोंको बहुत सावधानीसे कार्य करना चाहिए। पूर्वी देशोंमें नई नई क्रान्तियां होंगी। कई प्रकारकी नवीन घटनाएँ घटेंगी, जिनका परिणाम आगे बड़ा भयङ्कर सिद्ध होगा।

चैत्र मासका राशिफल

(ता० १४ मार्चसे १३ अप्रैल पर्यन्त)

मेष—उत्साह वृद्धि, चिन्तानाश, द्रव्यलाभ, उत्कर्ष, स्वास्थ्य सामान्य, उष्णता या पित्तवृद्धिके कारण मासके अन्तमें कुछ शारीरिक कष्ट शिर पीड़ा उदर विकारादि हो और स्त्री या सन्तानकी चिन्ता हो।

वृषभ—आर्थिक लाभ उत्तम, इच्छित कार्यके लिए स्थलान्तर गमन और यश प्राप्ति, केवल अपनी और स्त्रीकी शारीरिक स्थिति उत्तम रहनेके अतिरिक्त अन्य सब बातोंके लिए मास उत्तम है।

मिथुन—मानसिक अशान्ति, शारीरिक तथा साम्पत्तिक सामान्य कष्ट, कार्य व्यवसायमें या अदालती कार्योंमें क्लेश, लोकापवाद, किसी न किसी प्रकारकी चिन्ता सदा बनी रहे। अनुचरोंसे विरोध, वायु पीड़ा, लाभकी अपेक्षा हानि।

कर्क—मासका पूर्वार्ध स्वास्थ्यके लिए ठीक नहीं, उत्तरार्ध अच्छा है। किसी न किसी प्रकारसे सार्वजनिक कार्य हाथमें आवें और उनसे लाभ हो। पुराने गृहको नवीनरूप दिया जावे अथवा भूमि आदिका लाभ हो। जीवनमें कोई महत्त्वमण्डित स्थिर कार्य हो।

सिंह—अकारण मनस्ताप, गृहकलह, स्वजातीय सहयोगी एवं गुप्त शत्रु द्वारा हानि होने का योग है सावधान रहें। किसी प्रकारके भी उत्तरदायित्व पूर्ण कार्यमें कोई सम्मति न देवें अन्यथा अपयश मिलेगा। अधिकारियोंसे विरोध।

कन्या—कार्य व्यवसाय व्यापार धन्दा नौकरी आदिमें न्यूनता आनेका योग है। स्वास्थ्य भी ठीक न रहे, आंख कान या दांत में पीड़ा हो। स्त्रीके स्वास्थ्यके लिए भी यह समय नेष्ट है। सन्ततिके लिए उत्कर्षकारक है, शत्रु वृद्धि होकर अन्तमें नष्ट होंगे।

तुला—अविश्वसनीय लोगोंसे मैत्रीका परिणाम हानिकर सिद्ध हो। विपरीत मार्गमें प्रवेश करनेसे कार्य भंग, मनोभंग, साम्पत्तिक स्थिति चिन्ताकारक। बिना विचारके कार्य करनेसे पीछेसे पश्चात्ताप। उद्योग करने पर भी पूर्ण सफलता न मिले।

वृश्चिक—गृह चिन्ता, मिथ्या-कलंक, मित्र बन्धुओंसे विरोध, अपने अथवा स्त्रीके शरीरमें पीड़ा, यात्रा, कार्य व्यवसाय नौकरी आदिकी स्थिति चिन्ताकारक, राजकीय कार्योंमें विशेष हानि, शत्रु वृद्धि, अपयश।

धनुः—गृहचिन्ता, शत्रुनाश, अपेक्षित (आने वाले) सम्वाद या पत्रके न आनेसे विशेष चिन्ता, आयकी अपेक्षा व्यय अधिक हो, स्वास्थ्य उत्तम न रहे, रक्त विकार या उदर विकारसे कष्ट हो । प्रतिकूल परिस्थितिके कारण स्वयं ठोकर खाकर सावधान होना पड़े ।

मकर—शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम, उत्साहवर्धक कार्य हों, इच्छित कार्यकी सिद्धि, विरोधी वातावरण नष्ट होकर यश प्रतिष्ठाकी वृद्धि हो । लाभ मध्यम, राजद्वारमें विजय, स्त्री कष्ट ।

कुम्भ—बुद्धि अस्थिर, शीघ्रता या भावावेशमें आकर जो विवेकशून्य कार्य किया जावे उसका नेष्ट परिणाम भोगना पड़े । पूर्व सञ्चित द्रव्य का व्यय और मित्रोंसे धोखा हो, यह मास सावधानी का है ।

मीन—जिस समय कोई अच्छी स्थिति सम्मुख आनेका योग आवे ठीक उसी समय कोई संकटापन्न स्थिति अकस्मात् आ खड़ी होनेसे अनुकूल स्थितिका महत्त्व बहुत न्यून हो जावे । शारीरिक कष्ट, कौटुम्बिक कलह । मासका उत्तरार्ध कुछ शान्ति कारक एवं लाभप्रद सिद्ध होगा ।

सूचना—उपर्युक्त राशिफल प्रत्येक मनुष्यको शत-प्रतिशत ठीक बैठे यह बात अनिवार्य नहीं है, क्योंकि संसार के प्राणियोंको बारह भागोंमें या १२ राशियोंमें विभक्त करके यह विचार लिखा गया है । देश काल परिस्थिति और अपने अपने जन्मलग्नकी ग्रहस्थितिके अनुसार कुछ अन्तर रहना स्वाभाविक ही है । एतदर्थ मासका ठीक ठीक सूक्ष्म फल तो गणित द्वारा अपने वर्ष फलसे ही ज्ञात हो सकता है । मध्यम मानसे यह राशिफल भी मिल जाता है । अतः जिन लोगोंका जन्मपत्र वर्षफल बना हुआ नहीं है, उनके हितार्थ यह त्रैमासिक राशिफल हमने बड़े विचारपूर्वक लिखा है । यदि आप हमारे द्वारा अपना सूक्ष्म यथार्थ मासिक फल अथवा जीवन भरका भविष्य जानना चाहते हैं तो सूक्ष्म शुद्ध गणनानुसार जन्मपत्र वर्षफल बनवाइये ।

त्रैमासिक मुहूर्तादि विचार

[लेखक— श्री पं० जगन्नाथप्रसादजी ज्यौतिषी (जगनजी)]

विवाह मुहूर्त

माघ कृष्णपक्षमें

४ सोमवार ता० २५ जनवरी उ. फा. रे. ७ ल. गो. ७ ।

५ मङ्गलवार ता० २६ जनवरी उ. फा. रे. ८ दि. ल. १२ सम । हस्ते रे. ८ ल. गो. ७ ।

६ बुधवार ता० २७ जनवरी हस्ते रे. ७ दि. ल. १२ सम ।

७ गुरुवार ता० २८ जनवरी स्वा. रे. ६ लग्नाऽन्यगो. ६ आवश्यके ।

८ शुक्रवार २९ जनवरी स्वा. रे. ६ दि. ल. १

९ शनिवार ३० जनवरी मैत्रे रे. ८ घ. ३५ उप. रोग पञ्चक लग्न ७ अन्यगो० ।

माघ शुक्लपक्षमें

५ मङ्गलवार ता० ९ फरवरी रेवती. रे. ७ ल० अन्यगोधू० ।

फाल्गुन कृष्णपक्षमें

१ रविवार ता० २१ फरवरी उ. फा. रे. ८ ल. १० अंश १३ उप. ।

२ सोमवार ता० २२ फरवरी उ. फा. रे. ८ दि. ल. १२ सम ।

६ शुक्रवार ता० २६ फरवरी अनु. रे. ६ ल. १०

७ शनिवार ता० २७ " " रे. ६ दि. ल. १२ रात्रौ चौर पंचक अन्यगो० ।

१२ बुधवार ता. ३ मार्च उ. षा. रे. ६ ल. दि. १२–१

फाल्गुन शुक्लपक्षमें

१ रविवार ता. ७ मार्च उ. भा. रे. ६ दि. ल. ३ भौ. दा. ६

२ सोमवार ता० ८ मार्च रेवती रे. ७ दि. ल. ३, रात्रौ ६

उपनयन मुहूर्त

पौष शुक्लपक्षमें

११ रविवार ता० १७ जनवरी ल. चिं.।

माघ शुक्लपक्षमें

३ रविवार ता० ७ फरवरी

११ सोमवार „ १५ „

फाल्गुन कृष्णपक्षमें

२ सोमवार ता० २२ फरवरी

५ गुरुवार „ २५ „

फाल्गुन शुक्लपक्षमें

२ सोमवार ता० ८ मार्च

चैत्र कृष्णपक्षमें

३ बुधवार ता० २४ मार्च

५ शुक्रवार „ २६ „

चैत्र शुक्लपक्षमें

५ शुक्रवार ता० ६ अप्रैल

गेहारम्भ मुहूर्त्त

माघ कृष्णा १ शुक्रवार ता० २२ जनवरी ल. १२ तिथि दोषः

माघ शुक्ला ११ सोमवार ता० १५ फरवरी घ. ६ या. ल. ११–१२ सम

माघ शुक्ला १३ बुधवार ता० १७ फरवरी घ० १६ उप. ल. चिं. आवश्यके। अत्र माघमासो सर्वसम्मतो नाऽस्ति।

फाल्गुन कृष्णा २ सोमवार ता० २२ फरवरी आवश्यके ल. चिं.

फाल्गुन कृष्णा ४ बुधवार ता० २४ फरवरी घ. १४।४५ उप. ल. ३ बु. पू.

गेह प्रवेश मुहूर्त्त

माघ शुक्ला ११ सोमवार ल. ११ आवश्यके

फाल्गुन कृष्णा ७ शनिवार ता० २७ फरवरी

„ शुक्ला ७ „ „ १३ मार्च

घ. १७ या.

देव प्रतिष्ठा मुहूर्त्त

माघ शुक्ला ११ सोमवार ता० १५ फरवरी ल. ११

„ १३ बुधवार ता० १७ फर. ल. चिं.

फाल्गुन कृष्णा २ सोमवार „ २२ फरवरी

„ ५ गुरुवार „ २५ फरवरी

घ० १३ या०

फाल्गुन शुक्ला २ सोमवार ता० ८ मार्च

द्विरागमन मुहूर्त्त

माघ शुक्ला ११ सोमवार ता० १५ फरवरी घ. ६ यावत्।

माघ शुक्ला १३ ता० १७ फरवरी

फाल्गुन कृष्णा २ सोमवार ता० २२ फरवरी

४ बुधवार „ २४ „

१५ घ. उप.

५ गुरुवार „ २५ फरवरी

१२ घ० यावत्

१० सोमवार „ १ मार्च २४ घ. यावत्

१३ गुरुवार „ ४ मार्च

फाल्गुन शुक्ला २ सोमवार „ ८ मार्च

विद्यारम्भ मुहूर्त्ताः

पौष शुक्ला ११ रविवार ता० १७ जनवरी

माघ कृष्णा ६ बुधवार „ २७ „

„ शुक्ला ३ रविवार „ ७ फरवरी

६ बुधवार „ १० „

फाल्गुन कृष्णा ५ गुरुवार „ २५ „

१२ बुधवार „ ३ मार्च

प्रसूतिस्नानादि आवश्यक मुहूर्त

पौष शुक्ला १२ सोमवार ता० १८ जन घ. ५।३८ उप. चौल अन्न-प्राशन प्रसूता स्नान जल पूजा कर्ण वेध।
पौष शुक्ला १५ गुरौ ता. २१ जन. अन्नप्राशन कर्णवेध जल पूजा।
माघ कृष्णा ५ भौमे ता. २६ जन. प्रसूता स्नान।
" ६ बुधे ता. २७ " जल पूजा कर्ण वेध अन्नप्राशन।
" ७ गुरौ ता. २८ " घ. ५।४८ उप. चौल (मुण्डन) अन्न प्राशन कर्णवेध।
" ८ शुक्रे ता. २६ नासिका छेदन।
" १० रवौ ता. ३१ जन. प्रसूता स्नान।
" ११ सोमे ता. १ फर. मुण्डन, जलपूजा।
माघ शुक्ला ३ रवौ ता. ७ फर. प्रसूतास्नान।
" ५ भौमे ता. ६ " "
" ६ बुधे ता. १० " अन्नप्राशन कर्णवेध।
" ११ सोमे ता० १५ फरवरी मुण्डन घ. ६ या.
" १३ बुधे ता. १७ फर. चौल, अन्नप्राशन, जलपूजा, कर्णवेध।
फा० कृ० १ रवौ ता. २१ फरवरी प्रसूतास्नान सम।
" २ सोमे ता. २२ " अन्नप्राशन, नासिका-छेदन।
" ५ गुरौ ता. २५ " मुण्डन, अन्नप्राशन, प्रसूतास्नान, नासिकाछेदन।
" १० सोमे ता. १ मार्च जलपूजा।
" १२ बुधे " ३ " नासिका वेध घ. २५ उप. जल पूजा।
" १३ गुरौ " ४ " चौल, कर्णवेध, अन्नप्राशन।
फा० शु० २ सोमे ता० ८ मार्च अन्नप्राशन, कर्ण वेध, चौल घ. १।८ उप. प्रसूतास्नान सम।
" ३ भौमे ता० ६ मार्च प्रसूतास्नान।
चैत्र कृष्णा १ सोमे " २२ " प्रसूता स्नान सम, जलपूजा।
चैत्र कृ० ३ बुधे " २४ मार्च अन्नप्राशन।
" ५ शुक्रे " २६ " प्रसूतास्नान, अन्न-प्राशन, जल पूजा।
" १० बुधे ता० ३१ मार्च जलपूजा, अन्न-प्राशन १४ घ. उप.
" ११ गुरौ ता० १ अप्रैल प्रसूतास्नान।
" १२ शुक्रे " २ " अन्नप्राशन।
सं० २००० चैत्र शुक्ला २ भौमे ६ अप्रैल प्रसूतास्नान
" ५ शुक्रे ६ अप्रैल प्रसूतास्नान सम, अन्न-प्राशन।
" ७ सोमे १२ " जल पूजा।

सामान्य यात्रा मुहूर्त

पौष शुक्ल पक्षमें

१२ सोमवार ता० १८ जनवरी दक्षिण, घ. १४।५२ उप. पश्चिम दक्षिण।

माघ कृष्ण पक्ष में

१ शुक्रवार ता० २२ जन. घ. ७ या. उत्तर।
५ भौमवार " २६ " पूर्व। दक्षिणको सम।
११ सोमवार ता. १ फरवरी घ. १६ या. उत्तर पश्चिम, उप. उत्तर।
१२ भौमवार ता. २ फरवरी घ. १३।५६ उप. पूर्व।
१३ बुधवार ता० ३ फरवरी घ. ७ या. पूर्व।

माघ शुक्ल पक्षमें

२ शनिवार ता. ५ फरवरी पश्चिम।
३ रविवार " ६ " घ. ३७ उप. उत्तर।
५ भौमवार " ८ " पश्चिम।
६ बुधवार " ६ " घ. ३६ उप. पूर्व।
६ शनिवार ता. १३ " दक्षिण।
१० रविवार " १४ " घ. ३३।३६ या. पूर्व, दक्षिण, उप. दक्षिण।
११ सोमवार ता. १५ फरवरी घ. ३ या. दक्षिण पश्चिम।
१३ बुधवार ता. १७ " पश्चिम।

[शेष पृष्ठ ५८ पर देखिये]

वर्तमान विश्वव्यापी-संग्राम और ज्यौतिष

[लेखक—श्री पं० विशुद्धानन्दजी गौड़ ज्यौतिषाचार्य]

जगन्नियन्ता श्रीभगवान् ही इस निखिल ब्रह्माण्ड की सृष्टि स्थिति और प्रलयके कर्ता हैं। सब मनुष्य, जीव-जन्तु, स्थावर, जङ्गम, पदार्थ मात्र भगवान्की सृष्टि हैं। भगवान्ने ही सब पदार्थोंको विशेष विशेष गुण, रूप, प्रकृति, एवं शक्ति देकर सृजन किया है।

"त्वय्यैव नित्यसुखबोधतनावनन्ते
मायात उद्यदपि यत्सदिवावभाति।"

श्रीमद्भागवतकी ब्रह्माकी इस उक्तिसे असत्वरूपमय संसार होते हुए भी जगन्नियन्ता भगवान्की रची हुई सृष्टि होनेके कारण सत्वरूप ही प्रतीत होता है। क्योंकि वे स्वयं अविनश्वर हैं। इसलिये उनकी रची हुई वस्तुका भी सत्वरूपमय ही प्रतीत होना युक्तिसंगत है। निखिल ब्रह्माण्डके विभिन्न प्रदेशोंमें तथा विभागोंमें जितने भी प्राकृतिक विधान शासन करते हुए विद्यमान हैं। वे सब नियम तथा विधान भगवान्की ही कृति हैं। उनके कर्ता वे स्वयं ही हैं। वे ही सब जीवोंमें (प्राणियोंमें) अन्तर्यामी रूप होकर विराजते हैं। तथा बाहरसे भी वे ही निखिल ब्रह्माण्ड नियन्ताके रूपमें भी स्वयं ही प्रतीत होते हैं। वे ही स्वयं विशेष विशेष जीवोंको विशेष २ प्रकारकी नई २ शक्ति-प्रकृति एवं प्रवृत्ति तथा चेष्टा प्रदान करके विशेष कार्य कराते हैं। इन मानवीय शरीरोंसे जितनी हिंसा या जितना घात-प्रतिघात, कलह, द्वेष, अविचार, अत्याचार अथवा प्रलयकाण्ड, जो भी इस जगत्में देखनेमें आ रहा है—इसमें मनुष्यका स्वतन्त्र कर्तृत्व कहां तक समझा जा सकता है? मनुष्योंके द्वारा प्रकट किया हुआ भगवान्का ही यह विधान मानना पड़ेगा। वे ही उनके द्वारा विशेष २ कार्य करा रहे हैं। प्राणियोंका कर्मानुसार सुख-दुःखमय जीवनका विधान कैसा है, किस रूपमें कैसा था और किस रूपमें कैसा रहेगा? यह सब विषय उस भगवान्के बनाये हुए शास्त्र रूपी विधानसे ही ज्ञात हो सकता है।

"कर्मार्जितं पूर्वभवे सदादि यत्तस्य पक्तिं समभिव्यनक्ति"

वराहमिहिरके इस प्रमाणसे भगवान्के नियमित विधानको बतलाने वाला प्राणियोंके पूर्वजन्मार्जित सदसद्कर्मजन्य फलका दिग्दर्शन कराने वाला विधान ज्यौतिष-शास्त्र ही है।

प्रस्तुतमें ग्रहोंकी गोचर-विचार गणनाको ध्यानमें रखते हुए जो समय बीत रहा है अथवा जो भविष्यमें आवेगा उस पर यद्यपि "श्रीस्वाध्याय"में पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। "दैवज्ञकी दृष्टिमें संसार चक्र" आदि लेखोंसे सम्पादक महोदयने भी वर्तमान ग्रहोंके गोचर स्थितिके फलादेशको भली भांति स्पष्ट किया है। अन्य दैवज्ञ महोदयोंके लेख भी सारगर्भित देखने एवं पढ़नेमें आये हैं। तदनुसार ही उक्त विषयक फलादेश तथा फलित सम्बन्धी भविष्य चर्चा ही प्रस्तुतमें उपादेय होनेसे शास्त्रीय विचारोंमें बड़े २ सुयोग्य भविष्य वक्ताओंके विचारोंको देखते हुए—

यद्विस्तरेण कथितं मुनिभिस्तदस्मिन्
सर्वं मया निगदितं पुनरुक्तवर्जम्।
श्रुत्वापि कोकिलरुतं बलिभुक् विरौति
यत्तत्स्वभावकृतमस्य पिकं न जेतुम्॥

श्रीवराहमिहिर दैवज्ञकी इस उक्तिसे मुनि लोगोंने जिस विषयको विस्तारपूर्वक कहा है वराहमिहिरने अपने ग्रन्थमें उन समस्त पुनरुक्तियोंको छोड़कर शास्त्रका वर्णन किया है। कोयलकी मधुर ध्वनि सुनकर काकका शब्द करना उसका स्वभाव ही है। कोयलको जीतनेके लिये नहीं। इस वर्तमान समय

में वर्तमान शताब्दीमें निकट भविष्यकी शताब्दी परिवर्तनके कालमें ग्रहोंकी गोचर-विचार-गणना करनेसे क्रूर ग्रहोंकी स्थिति फलादेशके विषयमें कैसी भयावह चल रही है? इस विषयमें विशेष प्रकाश डालनेकी आवश्यकता भी नहीं है। समस्त भूमण्डलके प्रत्येक प्रदेशोंमें क्रान्ति नई प्रतीत हो रही है। क्रूर ग्रहोंका (शनि राहु भौम आदिकोंका) अपनी २ राशियों पर भोग होनेसे भूभागके जन्तुओं पर नेष्ट फलका परिणाम तो दूर रहा, बृहस्पतिकी स्थितिके भी अतिनेष्ट होनेके कारण समय विशेष दोषास्पद हो गया। बृहस्पति नियमतः अपनी स्वाभाविक गतिसे एक वर्षमें एक राशि पर ही भोग करता है। परन्तु इस वर्ष वर्षके आरम्भमें वृष राशि पर था, फिर शीघ्र-गति-गामी होकर मिथुन पर आया, तदनन्तर अपनी शीघ्र-गति बनाकर कर्क पर आ गया, पुनः वक्री होकर पौषमें ही मिथुन पर हो जायगा। ऐसी अवस्थामें बृहस्पतिके अतिचारी होने पर तीन राशिसे एक वर्षमें ही स्पर्श हो जानेसे—

यत्र वर्षे गुरुः शीघ्रगत्या राशित्रयं स्पृशेत्।
क्लेशान्विताश्च राजानः रक्तपूर्णा च मेदिनी॥

यह योग स्पष्ट प्रतीत हो रहा है। निखिल भूभाग का प्रत्येक प्रदेश, प्रत्येक राजा, प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक व्यक्ति ऐसा नहीं रहा है कि जिस पर उक्त ग्रहोंका सामयिक प्रभाव न पड़ा हो। इस समयमें भी पौष तक कर्क राशि पर गुरु चल रहा है। आगे पुनः चैत्र से भी कर्क पर रहेगा। इन दोनों समयोंमें पौष पर्यन्त कर्ककी स्थिति विशेष नेष्ट तथा ज्येष्ठ पर्यन्त कर्क राशिके गुरुकी स्थिति और भी दोषास्पद जाननी चाहिए।

केवल दोषकारक ग्रहोंकी नेष्ट स्थितिका विवेचन ही नहीं करना है, दोषकारक समयमें बहता हुआ प्रत्येक प्राणी अथवा विपत्तियोंके भोगमें फँसा हुआ प्रत्येक जन्तु प्रत्येक समय इसी जिज्ञासामें तथा अन्वेषणमें रहता है कि कहीं विश्रान्ति मिले, सुख मिले, शान्ति प्राप्त हो। मनुष्य उन उपायोंके अन्वेषण में भी रहता है जिनके द्वारा जीवन यात्रा सफल बन जाती है। यद्यपि ग्रहोंकी स्थितिके गोचरमें परिवर्तित हो जानेसे समय अपने सुधार पर स्वयं भी आता है। तो भी उस जगन्नियन्ता भगवान्के बनाये हुए विधानको अनुभवमें लाते हुए राजा और प्रजाके सम्बन्धमें सब जन्तुओंके सम्बन्धित होनेके नियमसे—

मूलं मनुजाधिपतिः प्रजा-
तरोस्तदुपघातसंस्कारात्।
अशुभं शुभं च लोके भवति
यतोऽतो नृपति चिन्ता॥

राजा ही प्रजारूपी वृक्षके लिए जड़ रूप होता है। इस लिये प्रजाके ऊपर उपघात संस्कारके लिये अशुभ और शुभ फल होता है। इस कारण राजाके मङ्गल विषयमें सदा चिन्ता करनी चाहिए। फिर राजा और प्रजा दोनोंका ही मङ्गल हो जाता है। समय अपने सुधार पर स्वयं ही आता है इस विचारको ही प्रथम स्पष्ट करके हम "श्रीस्वाध्याय" के पाठकोंको उक्त राजा एवं प्रजा सम्बन्धी मङ्गल एवं शुभ शान्ति-विषयक शास्त्रीय उपायोंकी विधि भी बतलाएंगे।

समय बराबर एक प्रकारका नहीं रहा करता है।
"नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण॥"

कालिदासकी इस उक्तिसे प्रत्येक व्यक्तिके जीवन में भी दुःखके पश्चात् सुख और सुखके पश्चात् दुःख का अवसर आता ही है। कभी कोई देश या समाज अथवा व्यक्ति उन्नतिको प्राप्त होता है, कभी अवनति का भी अनुभव करता है। इसी विचारसे समय सुन्दर भी आता है। अब प्रस्तुतमें निकट भविष्यमें थोड़ा ही समय बीतने पर अच्छा भी अनुभवमें आएगा।

कोष्ठागारगते भृगुपुत्रे
पुष्यस्थे च गिरां प्रभविष्णौ।
निर्वैराः क्षितिपाः सुखभाजः
संहृष्टाश्च जना गतरोगाः॥

शुक्र ग्रहके कोष्ठागारमें अर्थात् मघा नक्षत्र पर होने पर और बृहस्पतिके पुष्यनक्षत्रमें विराजमान

होने पर राजा लोग शत्रु रहित होते हैं। प्रजा सुखी होती है। हर्षित और रोग रहित प्रजा होती है। पुष्यनक्षत्र पर गुरुकी स्थिति और मघानक्षत्र पर शुक्रकी स्थिति आगामी आषाढ़ मासके कृष्णपक्षमें ही हो जाती है। उस अवस्थामें प्रजाको शान्ति, राजाओंकी परस्पर निर्मत्सरता होनेसे समय-सुधार, शान्ति एवं सुखमय जीवनका प्रतीत होगा और निखिल ब्रह्माण्ड-नायक भगवान्‌के विधानका शताब्दीके परिवर्तित आकारका स्वरूप भी दिखाई देगा। यद्यपि आगे चल कर कार्तिक मासमें तेरह दिनके पक्ष आदिका फल कुछ दूषित होगा, तो भी समय उतना भयावह नहीं होगा जितना इधर है।

सुख शान्तिके उपाय और पुष्यस्नान

शान्तिके उपायोंमें शास्त्रीय सिद्धान्तपद्धतिसे स्वयं ब्रह्माजीने महेन्द्रके लिये बृहस्पतिसे जो शान्ति कही थी, वृद्ध गर्गाचार्यजीने उसे भृगुसे कहा था, ऐसे दैविक उत्पातोंके उपस्थित होने पर—

पुष्यस्नानं नृपतेः कर्त्तव्यं दैववित्पुरोधाभ्याम्।
नाऽतः परं पवित्रं सर्वोत्पातान्तकरमस्ति॥

पुरोहित एवं दैवज्ञों द्वारा राजाओंको पुष्य-स्नान करना चाहिए। इसके अतिरिक्त पवित्र और सब प्रकारके उत्पातोंका नाश करने वाला दूसरा कोई और अन्य उपाय नहीं है। पुष्य-स्नानका इतना क्यों महत्त्व शास्त्रमें माना गया? सम्पूर्ण दैविक उत्पातों की निवृत्ति इससे किस प्रकारसे हो सकती है? इसमें क्या शास्त्रीय विज्ञान है? कभी अवसर मिला तो "श्रीस्वाध्याय" के पाठकोंको समझाया जावेगा। प्रस्तुतमें पुष्यस्नानकी विधि ही उपादेय होनेसे उक्त विज्ञान पर प्रकाश नहीं डाला जा रहा है। पुष्यस्नानकी विधि भी संक्षेपमें देनेसे ही लेख विस्तृतिसे बचाव हो पावेगा। यह विधान राजा महाराजाओंको तो परमावश्यक ही है। धनी-मानियोंको भी सर्वथा उपादेय है। साधारण जनता को भी अपनी शक्तिके अनुसार उक्त विधि पूर्वक पुष्य-स्नान करनेसे सम्पूर्ण अरिष्टनिवृत्ति होकर सम्पूर्ण मण्डल-लाभ होता है।

राजाओंके योग्य तथा धनी मानी व्यक्तियोंके लिये जो समृद्धिशाली हों उनके लिए पुष्य-स्नानविधि लिखते हैं। गर्गमुनिने जो सामग्री औषधियों सहित पुष्य-स्नानकी विधिमें बतलाई है उसे लिखते हुए विधिका उल्लेख किया जाता है—

(१) कंगनी, (२) त्रायमाण, (३) अपराजिता, (४) जीवा (वच), (५) विश्वेश्वरी (सौंठ), (६) पाठा (पाढ़), (७) समंगा (पसरन), (८) भङ्ग, (६) सहा (कुकुट्टी), (१०) सहदेवी, (११) नागरमोथा, (१२) शतावरी, (१३) रीठा, (१४) शिवा, (१५) भद्रा (मोथा), (१६) अजा (औषधिविशेष), (१७) क्षेमा (चौर नामक गन्ध द्रव्य), (१८) ब्राह्मी, (१६) सर्वबीज, (२०) स्वर्ण, (२१) मङ्गल ग्रहके सब द्रव्य और मङ्गल ग्रहकी सब औषधियां, (२२) बेल, (२३) कङ्गी, (२४) प्रशस्ता नामक औषधि। और भी माङ्गलिक द्रव्य ले लिये जायँ तो अच्छा है। इन सबको थोड़ी-थोड़ी मात्रामें शक्तिके अनुसार संग्रह करके सुदृढ़ कलशोंमें सूत बांध कर सब औषधियोंको डाल कर, दुधारे वृक्षोंके पत्ते और फलोंसे ढक कर पुष्यस्नान के निमित्त निर्दिष्ट वेदीके चारों ओर कोनोंकी व्यवस्था से रक्खे। सब कलश उपरोक्त औषधियोंके जलसे परिपूर्ण करके रखने चाहियें। कलश जितने भी औषधियोंके जलोंसे परिपूर्ण होंगे—अधिक संख्यामें होंगे—उसी क्रमसे अरिष्ट निवृत्तिमें समर्थ होंगे। राज्य की व्यवस्थासे यह अनुपात दृष्टिसे ही विधान जानना चाहिए। चक्रवर्त्ती राजाके लिए विस्तार विशेष हो जाता है इतना ही अन्तर है। छोटे राज्यके लिये छोटा विधान है।

इसके अनन्तर जो बैल बूढ़ा होकर स्वयं ही मरा होवे उसका चर्म (उत्तम लक्षण वाले बैलका चर्म होना चाहिये)। उस चर्मको निर्दिष्ट वेदीके पूर्वकी ओर बिछावें।

पुण्येष्वायतनेषु च तीर्थोद्यानरम्यदेशेषु।
पूर्वोदक्प्लवभूमौ प्रदक्षिणाम्भोवहायां च॥

इस सिद्धान्तसे पवित्र देव-मन्दिरमें, तीर्थ या

उद्यानमें, रमणीक स्थानमें परिक्रमा आकारमें, जल जहां बहता होवे अथवा पूर्व या उत्तरकी ओर जहां जल अच्छा बहता होवे। इत्यादि जलाशय स्थानमें नदी आदिके निकट विधि करानी चाहिये। अब निर्दिष्ट वेदीसे पूर्व बिछाए हुए बैलके चर्म पर मिल सके तो स्वाभाविक मृत्युसे ही मरे हुए तरुण बैलके चर्मको बिछावे। फिर उस पर सिंहका चर्म, उस पर व्याघ्रका चर्म बिछावे। पुष्यनक्षत्रमें श्रेष्ठ मुहूर्त्तमें, स्वर्ण, चान्दी और ताम्बेका धातुत्रयका बना हुआ आसन उक्त चर्मों पर बिछावे अथवा दुधारे वृक्षके काष्ठका बना हुआ आसन ही चर्मों पर बिछावे। आसनकी ऊंचाई एक हाथ, सवा हाथ, डेढ़ हाथ स्थितिके अनुसार प्रमाणमें रख कर श्रेष्ठ मन वाला राजा अपने आश्रित राजाओंके साथ, मन्त्री, पुरोहित, दैवज्ञों, नागरिकोंके सहित घिर कर आसन पर बैठे। पुरवासियोंकी उत्सवध्वनि ब्राह्मणोंके द्वारा उच्चारण किया हुआ पुण्य शब्द, मृदङ्ग, शङ्ख, तुरईका मङ्गल शब्द राजाके अरिष्ट तथा अनिष्टका नाश करता है। घृतपूर्ण-कलश भी रहना चाहिये और घृतपूर्ण-कलश से पहिले राजाका पुरोहितके द्वारा अभिषेक होना चाहिये।

आज्यं तेजः समुद्दिष्टमाज्यं पापहरं परम्।
आज्यं सुराणामाहार आज्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः॥
भौमान्तरिक्षं दिव्यं च यत्ते किल्विषमागतम्।
सर्वं तदाज्यसंस्पर्शात्प्रणाशमुपगच्छतु॥

इन दोनों मन्त्रोंके द्वारा पहिले अभिषेक राजाका होना चाहिये। कम्बलको उढ़ाकर भी अभिषेक घृत से करानेका विधान है। अथवा ऊनी वस्त्र ले सकते हैं। पुनः फल और पुष्पयुक्त पुष्यस्नानके जलसे राजा का अभिषेक कराना चाहिये।

ब्रह्मा विष्णुश्च शम्भुश्च साध्याश्च समरुद्गणाः।
आदित्या वसवो रुद्रा अश्विनौ च भिषग्वरौ॥
अदितिर्देवमाता च स्वाहा सिद्धिः सरस्वती।

इत्यादि कई मन्त्र हैं। इनके द्वारा उक्त जलसे स्नान एवं अभिषेक होना चाहिये। तदनन्तर "आपोहिष्ठा" इत्यादि ऋग्वेदके मन्त्र तथा कौष्माण्ड, महारोहिण, कुबेरादि अथर्ववेदके कुछ मन्त्र हैं, इनसे अन्तमें अभिषेक करके कपासी वस्त्र पहनाने चाहिये। इसके अनन्तर राजा पुण्याह वाचनसे, शङ्खशब्दसे आचमन करके, देव, गुरु, ब्राह्मण, दैवज्ञ, पुरोहितोंकी पूजा करे। पुनः छत्र, ध्वज, तथा शस्त्रोंका पूजन करे। "आयुष्यं वर्चस्यं रायस्पोषाः।" इत्यादि ऋचाओंसे अलङ्कारोंका पूजन करें। अनन्तर समिध, तिल, घृतसे अग्निमें हवन करें। पश्चात्—

यान्तु देवगणास्सर्वे पूजामादाय पार्थिवीम्।
सिद्धिं दत्वा सुविपुलां पुनरागमनाय वै॥
इत्यादि मन्त्रोंसे विसर्जन आदि करें।

नृपतिरतो दैवज्ञं पुरोहितं चार्चयेद्धनैर्बहुभिः।
अन्यांश्च दक्षिणीयान् यथार्हतः श्रोत्रियप्रभृतीन्॥
दत्वाभयं प्रजानामाघात स्थानगान्विसृज्य पशून्।
बन्धनमोक्षं कुर्यादभ्यन्तरदोषकृद्वर्जम्॥
एतत्प्रयुज्यमानं प्रतिपुष्यं सुखयशोऽर्थवृद्धिकरम्।
पुष्यं विनार्धफलदा पौषी शान्तिः पुरा प्रोक्ताः॥

इत्यादि नियमसे पौषमासकी पूर्णिमामें पुष्य नक्षत्रका विशेष महत्त्व है। अन्यथा प्रति पुष्यमें भी शान्ति करानी चाहिये। राज्यमें उत्पात एवं राष्ट्रों में परस्पर द्वेषाग्निसे उपद्रवोंमें या और अन्य उपसर्गोंमें अथवा राहु केतुके दर्शनमें अथवा ग्रहों की स्थिति विशेष दोषास्पद होनेसे पुष्यस्नानका ही विधान है।

राष्ट्रोत्पातोपसर्गेषु राहोः केतोश्च दर्शने।
ग्रहावमर्दने चैव पुष्यस्नानं समाचरेत्॥
नास्ति लोके स उत्पातो यो ह्यनेन न शाम्यति।
मण्डलं चापरं नास्ति यदस्मादतिरिच्यते॥
अधिराज्यार्थिनो राज्ञः पुत्रजन्म च कांक्षतः।
तत्पूर्वमभिषेके च विधिरेष प्रशस्यते॥

इत्यादि शास्त्रीय वाक्योंसे स्पष्ट ही है। शुभम्।

भारतीय सभ्यता और फासीवाद

[लेखिका—श्रीमती सौ० कमलाराणी एम० ए०]

[इस लेखका उत्तरदायित्व पूर्णरूपेण लेखिका पर ही है, इनके फासीवादका तात्पर्य फासिज्मसे है। नाजीज्म या फासीज्म ये कितने बुरे हैं या कितने भले हैं इस सम्बन्धमें अभी हम अपना कोई मत प्रकट नहीं कर सकते। —सं०]

इस समय जबकि सारे संसारको अत्याचारी लूट लेना चाह रहे हैं और मनुष्यकी तुच्छ भावनाएँ वशमें होनेके विपरीत सबको वशमें कर लेनेका अवसर पारही हैं; तब इस समय हमें बुद्धकी मैत्री और करुणाके महान् ऊँचे भावोंका स्मरण आता है। उपनिषदोंके ऋषियोंने, बुद्ध महाराजने, ईसामसीह तथा मोहम्मदसाहबने एक स्वरसे बताया है कि सभ्यता सांसारिक धन सम्पत्ति और शक्तिमें नहीं, रेल मोटर और विज्ञानके अन्यान्य कामोंमें नहीं, वरन् "सत्यं शिवं सुन्दरम्" के ऊँचे भावोंपर अपने जीवनको ले जानेमें है।

भारतीय सभ्यतामें प्राचीनकालसे इन भावों पर अनुचरण करनेके लिये बहुत दबाव डाला है। लिखित इतिहासके पहिलेसे भी हमारे देशमें ऋषि मुनि फल फूल खाते हुए, साधारण वस्त्र पहनते हुए, कुटियोंमें रहते हुए, बिना रेल मोटरमें बैठे ऐसे सभ्य थे कि आजकलकी कोई भी सभ्यता समता नहीं कर सकती। अशोक महाराज और राजा विक्रमादित्यका शासन तथा मध्यकालमें सम्राट् अकबर और शाहजहांका राज्य पाश्चात्त्य देशोंकी प्रत्येक सभ्यतासे कहीं बढ़कर है।

इसका कारण क्या है? आधुनिक पाश्चात्य देशोंके मनुष्य सांसारिक सुखोंमें ऐसे लिप्त हैं कि वह अपनी तुच्छ इच्छाओंकी पूर्तिके अतिरिक्त कुछ नहीं समझते। आधुनिक बननेका अर्थ वह नीरस मशीनरूप (Mechenical) रहनेको समझते हैं। वह मनुष्यमें ईश्वरत्वको नहीं देखते। उदाहरणतः कलाको देखिये—योरपीय कलाकार जीवन और प्रकृतिके रूपकी नकल करते हैं और मनुष्यकी इच्छा, उत्सुकता, उत्तेजना आदि भावनाओंको प्रकट करनेमें आनन्दका अनुभव करते हैं। परन्तु भारतीय कलाकार इन भावनाओंके अन्दरकी शक्तिको देखता है। वह बुद्ध महाराजके शारीरिक रूपको प्रकट नहीं करता या उनके जीवनकी किसी घटनाका वर्णन ही नहीं करता, वह उनके रूप द्वारा निर्वाणकी शान्तिको प्रदर्शित करता है। हमारे शिल्पकारोंको देखिये—ताजमहल किसी मनुष्यकी इन्द्रियोंकी सन्तुष्टिकी स्मृति नहीं, परन्तु अजर अमर प्रेमको प्रदर्शित करता है। शोककी बात है कि आजकलकी भारतीय जनता अपनी सभ्यताको छोड़ पाश्चात्त्य जड़ सभ्यताकी ओर आकर्षित होती जारही है।

हमारी सभ्यताका आधार क्या है? भौतिक, व्यापारिक, सैन्य सम्बन्धी लक्ष्य सब मनुष्योंमें जो ईश्वरत्व है उसके आधीन है। हमारी शिक्षाका लक्ष्य ब्रह्मचर्य है—जो जीवनको नियम पर चलाता है। मन और शरीरको पवित्र बनाता है और प्रत्येक मनुष्यमें दैवी ज्योति बढ़ाता है। जीवनका उद्देश्य आत्माकी स्वाधीन उन्नति है। हम राजनैतिक स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्रतामें अधिक महत्त्व इस कारण समझते हैं क्योंकि उसमें प्रत्येक मनुष्यको अपनी आत्माको उन्नत करनेका और "सत्यं शिवं सुन्दरं" पर अनुचरण करनेका अवसर मिलता है।

इसके प्रतिकूल नाजीवाद सभ्यता वह है जो हमारी महान् आध्यात्मिक सभ्यताके विरुद्ध है। वह State की शक्ति और उन्नतिमें बहुत महत्त्व समझते हैं। उनका विचार है कि जो कुछ भी संसारमें प्राप्त करने योग्य है वह है सम्पूर्ण शक्तिमान् State जिसमें मनुष्य मशीनमें छोटेसे पुरजेके समान है जो कि मनुष्यके विचारोंके प्रतिकूल ही क्यों न हो। नाजीवादका आधार क्या है?

पहला अहङ्कार "हमारी सबसे ऊँची जाति है" ऐसा वह मानते हैं।

दूसरा मनुष्यमें जो ईश्वरत्व है वह State की इच्छाओं और विचारोंके आधीन है। नाज़ीवादमें मनुष्यको अपनी आत्माको स्वाधीनतापूर्वक उन्नत करनेका अवसर नहीं मिलता। वह मनुष्य नहीं है, वह तो लोहेकी मशीनमें पुरज़ा है जो अपनी इच्छासे नहीं चलता बल्कि मशीन चलानेवालेकी इच्छा पर चलता है।

तीसरा आधार नाज़ीवादका हिंसा है, जिसकी लाठी उसकी भैंस। नाज़ी शिक्षाका लक्ष्य मनुष्यको निर्दयी कठोर सिपाही या मशीन चलाने का पुर्ज़ा बनाना है। आत्मिक उन्नतिकी स्वतन्त्रताको बढ़ानेका नाज़ी शिक्षामें अभाव है।

पाश्चात्त्य देश नाज़ीवादकी घृणित-मनोवृत्तिको अनुभव नहीं कर सकते। यह केवल भारतीय ही जान सकते हैं कि सभ्यताको इस घृणित मनोवृत्ति से क्या भय है। कहते हैं कि प्रजातन्त्रता, स्वतन्त्रता, पूंजीवाद, साम्यवाद, देशभक्ति इत्यादि इत्यादि ख़तरे में हैं। परन्तु यह सब तो आत्माकी उन्नतिके साधन हो सकते हैं, लक्ष्य नहीं। इन साधनोंको लक्ष्य मान बैठना उचित नहीं। यदि प्रजातन्त्रताके विना किसी प्रकार हमें अपनी आत्मिक उन्नतिका पूरा अवसर मिल सके तब प्रजातन्त्रताकी पुकारकी क्या आवश्यकता? फ़ासीवाद तो इस कारण निन्दनीय है कि उसके आधार बहुत नीच हैं। आज आधुनिक Propaganda (प्रचार करनेकी संस्था) द्वारा मनुष्य साधन और लक्ष्यके भेदको नहीं जान पाता। इस संस्थाके विरुद्ध लड़ना आवश्यक है, क्योंकि यह मनुष्यके विचारोंको—मनुष्यके मस्तिष्कको—कुचल देता है, हमारे हिताहित ज्ञानको वशमें कर लेता है। हमें पता नहीं चलता कि क्या सत्य है और क्या असत्य।

हमें इस अन्धकारमय नाशकारी संग्राममें जानना चाहिये कि ख़तरेमें है क्या? प्रत्यक्ष हमारी सभ्यता, सत्यं शिवं सुन्दरंके ऊँचे भाव जो हमारी सभ्यताके आधार हैं। हम इन तीनों भावोंको सुन्दरं में कर सकते हैं। सत्य ज्ञानकी सुन्दरता है जो शिवं है वह सुन्दर भी है। इस संसारमें प्रत्येक मनुष्यको अपना जीवन लीलामय बना लेना चाहिए, अर्थात प्रत्येक कार्यका लक्ष्य 'सत्यं शिवं सुन्दरं' होना चाहिए। सत्य तथा धर्म पर चलनेकी आवश्यकता आज कल बहुत ही अधिक है। कहा जाता है कि जिस समय निपोलियन वयाना (Vienna) की प्राचीरों पर आक्रमण कर रहा था, उस समय वहीं उस नगरमें एक छोटी-सी कुटियामें विथोवन (Beethovan) एक राग बनानेमें निमग्न था। वह गान योरपीय गानशास्त्रमें अभी तक सबसे अधिक प्रसिद्ध है।

[पृष्ठ ५२ का शेष]

फाल्गुन कृष्णपक्ष में

१ रविवार ता० २१ फरवरी पूर्व, उत्तर
२ सोमवार ता० २२ „ दक्षिण
३ भौमवार ता० २३ „ घ० १५ या० दक्षिण, पूर्व,
१० सोमवार ता० १ मार्च उत्तर
१२ बुधवार ता० ३ „ दक्षिण, पूर्व,
१३ गुरुवार ता० ४ „ पूर्व

फाल्गुन शुक्लपक्षमें

२ सोमवार ८ मार्च घ० १५ उप० उत्तर पश्चिम
३ भौमवार ६ „ घ० १४ याव० „ „
६ शुक्रवार १२ „ घ० १५ उप० दक्षिण, पूर्व,
७ शनिवार १३ „ घ० १७ या० दक्षिण

चैत्र कृष्णपक्षमें

१ सोमवार ता० २२ मार्च दक्षिण
५ शुक्रवार ता० २६ „ उत्तर
७ रविवार ता० २८ „ घ० १० उप० पूर्व, उत्तर
६ भौमवार ता० ३० „ घ० २० उप० दक्षिण, पूर्व
१० बुधवार ता० ३१ „ दक्षिण, पूर्व घ० १४ या०
११ गुरुवार ता० १ अप्रैल दक्षिण पूर्व घ० ८ या०

चैत्र शुक्लपक्षमें

२ मङ्गलवार ता० ६ अप्रैल पूर्व
५ शुक्रवार ता० ६ „ दक्षिण पूर्व

शिक्षाका भारतीयी-करण

[लेखक—व्याकरणाचार्य श्री पं० मनोहरलालजी शास्त्री गौड़, एम० ए०, एम० ओ० एल०]

शिक्षाके प्रायः दो ही लक्ष्य हो सकते हैं; या तो मनुष्यको सच्चे अर्थमें मनुष्य बनाना या फिर धनोपार्जनके योग्य बनाना। (Man making education and money making education) वर्तमान शिक्षा-प्रणाली दोनो लक्ष्योंमेंसे किसकी पूर्ति कर रही है? इसकी यदि आलोचना करें तो इसी निश्चय पर पहुँचेंगे कि आजका नवयुवक इस शिक्षासे न तो मनुष्यत्व ही प्राप्त कर सका है और ना ही धन। भले ही मानव अपनी बनाई हुई वर्तमान सभ्यता पर गर्व करे और कहे कि उसकी उपलब्धियां (Achievements) अप्रत्याशित एवं अनवलोकित-पूर्व हैं; किन्तु इस बातसे भी किसी को अस्वीकार न होगा कि वास्तविक सभ्यताके परिणाम या चिह्न दोनों ही आजके मनुष्योंमें नहीं हैं। मानव सभ्यताके फल—पारस्परिक प्रेम, दूसरोंके सुखोंका प्रबन्ध कर अपने सुखोंका विचार करना, अपनेपन को मानवताकी सीमासे सीमित करना आदि आदि हैं। ये बातें मनुष्यमें कितनी मात्रामें हैं? इसका प्रत्यक्ष प्रमाण वर्तमान युद्ध है। आज एक जातिका बालक दूसरी जातिके बालकके प्राण हरणके लक्ष्यसे वर्कस् शापमें काम कर रहा है; नवयुवक अपना बाहुबल दूसरे नवयुवकको संसारसे मिटानेमें लगा रहा है; वृद्ध अपनी अनुभूतियाँ एवं परिपक्व ज्ञानसे अपनी ही सन्तान को मिटा रहा है। संसारकी जातियोंमें यदि एककी भी मनोकामना भगवान् पूर्ण करदें तो सम्भवतः जगत् मानव-शून्य हो जाय। यह है हमारी शिक्षा द्वारा किया गया मानवताका सर्जन।

अब रहा धनका प्रश्न। इसको यदि हम दूसरे देशोंके दृष्टिकोणसे देखें तो हमें लाभ ही क्या है। दूसरे देशोंके नागरिक अधिकार, परिस्थितियाँ एवं वैज्ञानिक उन्नति भारतसे बहुत भिन्न हैं। इसलिए अपने देशमें धनोपार्जनके योग्य आधुनिक शिक्षा प्राप्त मनुष्य बनता है या नहीं? यही विचारना है। धनोपार्जनके दो ही साधन हो सकते हैं—सेवा या व्यापार। व्यापार तो बिना धनराशिके चालू कैसे किया जाए। इसलिए निर्धनके लिए एकमात्र साधन सेवा ही रह जाती है। इसमें भी जो उत्तम या मध्यम वर्गके लोग हैं वे प्रतिष्ठित होनेके कारण सेवाकी रिक्तियोंको अपने साधन एवं परिचयके बलसे हथिया लेते हैं। ये लोग यद्यपि धन-राशिको लगाकर व्यापार भी चालू कर सकते हैं और इस प्रकार यदि सेवाकी रिक्तियोंको (Vacancis) निर्धन-वर्गके लिए छोड़ देते तो रोटी कपड़ेकी समस्या किसी सीमा तक सुलझ सकती थी। परन्तु उस वर्गको भी सेवामें ही अपूर्व आनन्द आ रहा है। इसका एक कारण यह भी है कि भारतवर्षमें सेवा सेवाकी भावनासे न होकर शासनकी भावना से होती है। जब धन और शासन दोनों मिलें तो बुरा क्या है। यही कारण है कि आज प्रत्येक विभाग की रिक्तियोंके लिए धनिक-वर्ग भी उतना ही लालायित है जितना निर्धन-वर्ग। इस लिए जहां तक सेवाका प्रश्न है समाजमें "मत्स्य न्याय" चलता है। सबल दुर्बलका बाध कर लेता है।

और भी; जो शिक्षा जातीय गौरव, राष्ट्रिय-प्रेम तथा पूर्वजोंके अवदानोंका विवेचनात्मक अध्ययन करना नहीं सिखाती वह अधूरी ही नहीं, जातीय उत्थानके लिए घातक भी हो सकती है। अपने देशके स्वार्थों पर मर मिटनेकी भावना तभी नवयुवकमें आएगी जब कि उस देशके आचार, सभ्यता एवं साहित्यकी उन्नतामें विश्वास हो। यदि शिक्षा इस विश्वासमें त्रुटि लाती है तो जातीय उन्नतिके भविष्य में बाधा आनेकी आशङ्का पूरी है।

इतना ही नहीं, किसी देशकी शिक्षा पर किसी समुदाय या शासन विशेषका प्रभाव न पड़ जाए — इसी लिए ऋषि लोग जङ्गलोंमें रह कर पढ़ाना हितकर समझते थे और राजाओंके उपकारोंमें अपनेको नहीं बांधते थे। शिक्षाका आयोजन निरपेक्ष सुलझे हुए अनुभवी शिक्षितों द्वारा ही होना चाहिये। यदि शासन या समुदाय विशेषने शिक्षाको अपने मनोनुकूल बनानेमें सफलता प्राप्त करली तो वह समुदाय या शासकवर्ग तभी तक उस जातिकी हितकारिणी शिक्षाका आयोजन करेगा जब तक उसके स्वार्थ उस जातिके साथ सम्बद्ध होंगे। जब जातिके स्वार्थ और उस वर्गके स्वार्थ टकराएंगे तभी शिक्षा पर भी प्रभाव पड़ेगा। इस लिए शिक्षा द्वारा सदा होने वाली देश की उन्नतिको तभी सततस्थायिनी बनाया जा सकता है जब कि उसकी आयोजना ऐसे व्यक्ति ही करें जिनके स्वार्थ एवं देशके स्वार्थ कभी भिन्न ही न हो सकें। अर्थात् वे उस देशके रहने वाले हों। समाजमें उत्पन्न हुए दोषों तथा राजनैतिक दुर्व्यवस्थाओंका सुधार भी शिक्षासे ही करना है। शिक्षित मस्तकोंसे ही परिवर्तन लाने वाली क्रान्तियाँ उठा करती हैं। जिस प्रकार अपने रोटी कपड़ेका प्रबन्ध करना एक शिक्षितका कर्त्तव्य है उसी प्रकार अपने पड़ौसियोंके स्वार्थों एवं भूखे नंगे अपने अशिक्षित भाइयोंकी आवश्यकताओं पर आत्माहुति देना भी एक शिक्षित पुरुष ही कर सकता है। ये बातें तभी मनुष्य कर सकेगा जब कि अपने देशकी सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक उथल-पुथलका विवेचनात्मक अध्ययन उसने किया हो और जाना हो कि उसके देशकी उन्नति या अवनतिमें मूल कारण क्या क्या बन चुके हैं। इसके साथ साथ देशकी वर्तमान परिस्थितिका भी उसे क्रियात्मक ज्ञान हो। समाजकी भलाईके लिए उठाए गए अनेकों आन्दोलन इसी कारण असफल होकर सदाके लिए दब गए कि वे समाजके परम्परागत विश्वासों एवं रूढ़ रीतियोंके विरुद्ध पड़े। और यह होता इसी कारण है कि आन्दोलनके सञ्चालनसे पूर्व इसका सन्तुलन नहीं किया जाता।

शिक्षा-कालमें छात्र तथा उसके आचार्योंका रहन-सहन भी इस प्रकारका होना चाहिये कि वह साधारण समाजसे नितान्त भिन्न न हो। विश्वविद्यालयादि शिक्षा केन्द्रोंसे जब उच्च-शिक्षा प्राप्त कर नवयुवक जीवनमें पदार्पण करता है तो अपने सम्पर्कमें आने वालोंमें वह हिलमिल नहीं सकता — यहांके स्वाभाविक जीवनमें सब प्रकारके मनुष्योंके साथ कन्धेसे कन्धा मिला कर चलना पड़ता है। इस जीवनका ज्ञान क्रियात्मक तथा अपने ही कार्योंका फल इसकी अनुभूतियाँ होती हैं; जब कि छात्रजीवन कृत्रिम तथा विचारमय आदर्शोंसे भरा हुआ होता है। अर्थशास्त्र तथा समाजशास्त्रकी थ्यूरियां छात्रके मस्तकमें अवश्य भरी पड़ी हैं; किन्तु वे हैं ऐसे शास्त्रियोंकी बनाई हुई जिनके सामने भारतका भूखा व नंगा किसान कभी नहीं आया और नाहीं वह कभी परतन्त्र देशका नागरिक बना है। वह एक आकाशमें उड़ने वाला पक्षी है जिसको सर्वत्र समतल ही प्रतीत होता है। वह क्या जानता है कि भूमि पर कहां निचाई तथा उंचाई है। ऐसे शास्त्रकारोंके स्वर्णिल-स्वप्नोंको हृदय पर अङ्कित कर जब वास्तविकताकी ओरसे छात्रने आँखें मींचना सीख लिया तब वह भविष्यमें जातिका उपकार करेगा — ऐसा विश्वास किस आधार पर किया जाए ? सच तो यह है कि जब ग्रामीण बालक भी विश्वविद्यालयोंकी उच्च शिक्षा प्राप्त कर निकलते हैं तो वे अपने मातृभूमि ग्रामोंको अपने निवासयोग्य नहीं पाते। नगरोंमें रहना उनकी आवश्यकता बन जाता है और कार्यक्षेत्र है ग्रामोंमें।

इस लिए देशकी सबसे बड़ी आवश्यकता आज यह है कि अपने नवयुवकोंकी शिक्षाकी बागडोर समाजको अपने हाथोंमें लेनी चाहिये। भावी भारत का नव-निर्माण वे ही लोग कर सकेंगे जो संस्कृतिमें भारतीय होंगे। और बातोंमें भारतीयता लानेसे पहिले शिक्षाका भारतीयी-करण परमावश्यक है। भारतीय छात्रके सम्मुख भारतीय गौरव-पूर्ण इतिहास हो, भारतका क्रियात्मक अर्थशास्त्र और भार-

त्रैमासिक महर्घ समर्घ (तेजी मन्दी) विचार

[लेखक—ज्योतिषालङ्कार श्री पं० आनन्दस्वरूपजी दैवज्ञरत्न]

यद्यपि राजनैतिक वातावरण क्षुब्ध होनेके कारण और नित्य प्रति नये २ सरकारकी ओरसे वस्तुओं पर कण्ट्रोल आदिकी गड़बड़के कारण व्यापारिक संसारमें अधिक उथल पुथल और अकथनीय घटनाएँ घटती रहती हैं। तथापि मेरे विचारमें ग्रहोंका तेजी मन्दी का प्रभाव प्रत्येक वस्तु पर अवश्य पड़ता है और उनके अनुसार ही तेजी मन्दीके कारण बनकर घटा-बढ़ी होती रहती है। अब सूक्ष्म रूपमें अपने कुछ विचार पाठकोंके सामने उपस्थित करता हूँ, आशा है इनका आश्रय लेकर विचारपूर्वक कार्य करते हुए व्यापारी जन लाभ उठावेंगे।

रूई

१६ जनवरी ४३ को बन्द बाजारके समय रूई खरीदें यहांसे बाजार तेजीकी ओर चल पड़ेगा और २२ जनवरी ४३ तक २) २।।) की तेजी आजावेगी। २२ जनवरीको बन्द बाजारके समय लिया हुआ माल सैटिल करके फालतू माल बेचना और ३० जनवरी तकके मन्देमें फिर सैटिल करलें। फिर ३१ जनवरी को खुलते बाजार माल खरीद कर ६ फरवरी तकके तेजीके उछालेमें बेचदें और फालतू माल भी बेच लें क्योंकि यहांसे २१ फरवरी तक जोरदार मन्देकी धारणा है और इसमें २) का मन्दा अवश्य आजावेगा। इस मन्देमें बिका हुआ माल सैटिल करके और फालतू माल भी खरीदना चाहिये; यहांसे ६ मार्च तक बाजारमें शनैः शनैः तेजी ३) तक आजावेगी और यह तेजी आखिरी होगी; यहांसे १५ अप्रैल तक बाजारमें जोरदार मन्दी आवेगी। यदि बीचमें कोई तेजीका उछाला भी आवे तो घबरानेकी आवश्यकता नहीं, अपितु उस उछालेमें माल बेचकर मन्देमें सैटिल करके लाभ उठावें।

नोट नं० १—चूंकि गेहूं, चना, बाजरा, मक्की, खांड आदि पर सरकारी कण्ट्रोल हो गया है इसलिए इन वस्तुओंका मन्दा तेजी लिखना व्यर्थ सा है, क्योंकि समस्त जनताको इससे कुछ लाभ नहीं हो सकता।

नं० २—७ फरवरी ४३ तक जब तक शनि वक्री रहेगा तब तक तिलहनकी सब वस्तुएँ और सब प्रकारकी धातुओंमें तेजीका असर रहेगा। किन्तु ७ फरवरीको शनि मार्गी होने पर एक बार लोहा, तांबा आदि सब धातुकी वस्तु और सब प्रकारकी तिलहनकी वस्तु और बिनौले आदिकी मारकीटोंमें जबरदस्त मन्दा आवेगा। इसलिए व्यापारी वर्गको ७ फरवरीसे पहले तेजीका काम सैटिल करके मन्देका व्यापार करना लाभप्रद रहेगा।

नं० ३—२८ जनवरीसे ३१ मार्च तकके समयमें हैशियन, पाट, धानमें जोरदार तेजी रहेगी।

नं० ४—१ अप्रैलसे १ जून तकके समयमें कालीमिर्च, गेहूँ, चांदी, चावल, जवाहरातमें जोरदार तेजीका असर रहेगा। आगे भगवान जाने।

तीय संस्कृतिसे अनुस्यूत ही उनका समाज शास्त्र हो। उसके मस्तकमें वे कूटनीतिके विषाक्त परमाणु न प्रविष्ट किए जाएँ जिनसे मानवताका वर्तमान स्वरूप बन गया है। आध्यात्मिक पतन लाने वाली राजनीति आज नहीं तो कल अनुपयुक्त अवश्य होगी। भारत उस विज्ञानको नहीं चाहता जिसकी वृद्धि जन-धन-संहारके साथ साथ ही होती है। उसे वह व्यापारिक कुशलता भी नहीं चाहिए जिससे अधीनस्थ जातियों का शोषण होता है।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः" का पाठ उसके पूर्वजोंने दिया है वही वह पुनः पढ़ना चाहता है और उसीका प्रकाश आज उन जातियोंको देना चाहता है जो अन्धकारमें पड़ी हुई या अपनेको प्रकाशमें आई हुई समझती हैं। भारतीय नवयुवककी शिक्षामें ये गुण तभी होंगे जब शिक्षाका सब प्रकारसे सम्यक्तया भारतीयी-करण होगा।

त्रैमासिक व्यापार-विमर्श (तेजी मन्दी)

[लेखक—श्री पं० विहारीलालजी शर्मा दैवज्ञ]

सौर माघमासका ब्यौरा

[ता० १४ जनवरीसे ११ फरवरी पर्यन्त]

इस मासके ग्रह-योगोंकी जांच पड़तालसे ज्ञात होता है कि प्रत्येक वस्तुके भावोंमें दोनों ओरकी घटबढ़ चलेगी । अतः रुई ३०) ४०) टके । शींगदाणा एरण्डा चांदी २॥) ३), सोना विनौला १॥) २), अलसी गेहूं १) १।) के लगभग ऊँचे नीचे घर देखेंगे । सम्भव है कि अधिकतर प्रभाव तेजीकी ओर चल पड़े । ऐसे अवसर पर ज्योतिषीका वरतारा, मौसमकी वास्तविकता, राजकीय प्रकरणकी तारतम्यता आदि सामयिक परिस्थितिका विचार करना व्यापारीका प्रथम कर्तव्य है ।

अब हम 'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी व्यापारी वर्गके लाभार्थ अर्ध-साप्ताहिक या साढ़े तीन तीन दिनकी तेजी मन्दीका विचार लिखते हैं । पाठक इसका अनुभव करें और लाभ उठावें ।

ता० १४ जनवरी प्रातः १० बजेसे (३॥ दिनमें)—अचानक ही उछाला आयेगा; अतः पहले वाले सोदे को लाभ पूर्वक डबल बेचना अच्छा है ।

ता० १७ जनवरी दिनके ४ बजेसे (३॥ दिनमें)—रुई ६) १०) टके । चांदी सींगदाणा एरण्डा १) सोना विनौला ॥) ॥=) अलसी गेहूं ।) घटना मालूम होता है । पीछे बेचाण लिख आये हैं उस सौदेको नफा पूर्वक यहां सुधार लेवें ।

ता० २० जनवरी रात १० बजेसे (३$\frac{1}{3}$ दिनमें)—बेलेन्समें माथे (बेचाण) का कोई सौदा खड़ा हो तो यहां मुनाफेसे सुधार लेवें ।

ता० २४ जनवरी सवेरे ५ बजेसे (३$\frac{1}{3}$ दिनमें)—धन्दा मन्दीकी लाईनमें जिस पोइण्टसे करना चाहिए उसी प्रकार करिये ।

ता० २७ जनवरी दिनके ११ बजेसे (३$\frac{1}{3}$ दिनमें)—अचानक आने वाली तेजीमें पहले ही माल खरीद लेना चाहिए और भाव बढ़नेपर डबल बेच दीजिए ।

ता० ३० जनवरी सायङ्काल ७ बजे से (३$\frac{1}{3}$ दिनमें)—मार्कीटमें दुतर्फा घटबढ़ चलेगी । जहां मामूली फेरफार मालूम दे ऐसे मौके पर नजराणा (जोटा) खा जाना अच्छा है ।

ता० २ फरवरी रातके ११ बजेसे (३$\frac{1}{3}$ दिनमें)—आई हुई मन्दीमें झटसे माल खरीदना चतुर व्यापारी का काम कहायेगा ।

ता० ६ फरवरी सवेरे ७ बजेसे (३॥ दिनमें)—तेजी आवेगी । पहले लिख आए हैं कि वायदा खरीदना ठीक है, उसका यहां नफाके साथ बेचाण करदें ।

ता० ६ फरवरी दिनके २ बजेसे (३॥ दिनमें)—रुई व चांदीके भावमें मन्दीका रियक्शन आते भाव सुधरेंगे । व्यापार मारकेटकी चाल देखकर ही करना उचित है ।

सौर फाल्गुनमासका ब्यौरा

[ता० १२ फरवरीसे १३ मार्च पर्यन्त]

इस मासकी ग्रहगणित देखनेसे ज्ञात होता है कि मन्दीका प्रभाव अधिक चलेगा । दो तीन संयोग ऐसे भी बने हैं कि भाव बढ़ेंगे । इसका खुलासा यह कि रफ्तार जब मन्दी होती है तब आये हुए तेजीके उछाले उतर जाना ही आंकड़ेका द्योतक है । अतएव इस महीनेमें दो तीन उछाले अच्छी तेजीके

आएँगे और रुई १५-२० टके। सोना बिनौला ।।।) चांदी मूंगफली एरण्डा १।।) अलसी गेहूँ ।।) के लगभग गरमाई लेते पीछे ड्योढे आंकड़ेमें घट जावें तो आश्चर्य नहीं। तात्पर्य यह कि तेजीके आंकड़े बताये बाद कुछ मन्दीकी सूचना भी दिये देता हूं। ऐसी द्विविध समस्यामें व्यापार बहुत सावधानीसे करना चाहिए।

ता० १२ फरवरी रात ६ बजेसे (३।। दिनमें)—भाव टिके हुए रहें या साधारण घटबढ़ हो। थोड़ी घटबढ़में लोग नजराणा खाया करते हैं, उचित समझें तो आप भी ऐसा करलें।

ता० १६ फरवरी प्रातः ५ बजेसे (३।। दिनमें)—रुख मन्दीका प्रतीत होता है। अतः व्यापार उतना ही करना जितना सम्भाल सकते हैं।

ता० १६ फरवरी प्रातः १० बजेसे (३।। दिन में)—भाव दुतर्फा घटबढ़में चलेंगे, आगेके लिए लाईन तेजीकी कह सकते हैं।

ता० २२ फरवरी प्रातः ५ बजेसे (३।। दिनमें)—रुई १०) १५) टके। चांदी मूंगफली एरण्डा १) १।।) बिनौला सोना ।।।) अलसी गेहूँ ।=) के लगभग बढ़ना प्रतीत होता है।

ता० २५ फरवरी रातके १२ बजेसे (३।। दिनमें)—साधारण घट बढ़ चलते रुख तेजीकी ओर रहेगा।

ता० १ मार्च प्रातः ७ बजेसे (३।। दिनमें)—चालू तेजीमें मन्दी वापरे। इस समय सौदा मन्दी के टोनसे करना चाहिए।

ता० ४ मार्च दिनके ४ बजेसे (३।। दिनमें)—घटावढ़ी होकर रुख मन्दीका प्रतीत होता है। सौदा करना ही है तो मारकेटका टोन देखकर करें।

ता० ७ मार्च रातके ७ बजेसे (३।। दिनमें)—यदि भाव घट जाय तो माल खरीद लेना अच्छा है। किये गए सौदाको संभालते हुए अवसर आते ही सुधारना न भूलें।

ता० ११ मार्च प्रातः ८ बजेसे (३।। दिनमें)—पिछली चली आई मन्दीमें खरीद किये गए माल को इस तेजीमें नफाके साथ बेचना ठीक है।

सौर चैत्र मास का ब्यौरा

(ता० १४ मार्चसे १३ अप्रैल १६४३ ई० पर्यन्त)

इस मासकी ग्रह गणना यह बताती है कि मासका पहला भाग या पूर्वार्ध प्रायः तेजीमें निकले और रुई २० टका, चान्दी, सींगदाणा, एरण्डा २) २।।, सोना बिनौला १) १।), अलसी गेहूँ ।।) ।।=) के लगभग बढ़ेगा। मासके अन्तिम भाग वा उत्तरार्ध में भाव घटता जावे और घटकर टिका रहेगा। सोदा करनेके पहले वस्तुके वायदेकी मिती, समयका वातावरण, ग्रहसंयोग, फिगरिंग लाईन आदि बातोंका पूरा-पूरा ध्यान रखकर धन्दा करना चाहिए।

ता० १४ मार्च दिनके ४ बजेसे (३।। दिनमें)—तेजीकारक ग्रहने अपना तीरकमान संभाला है, मँहगाईका सन्नाटा मालूम देगा। वायदेके सौदागरोंको चाहिए कि आगे अचानक आनेवाली तेजीके पहले ही अपने व्यापारका प्रोग्राम ठीक करलें।

ता० १७ मार्च रातके १२ बजेसे (३।। दिनमें)—रुई ५-७ टके, चान्दी, मूंगफली, एरण्डा ।।=) ।।।) सोना बिनौला ।-) ।≡), अलसी गेहूँ =) ≡) के लगभग बढ़नेका योग प्रतीत होता है।

ता० २१ मार्च प्रातः ६ बजेसे (३।। दिनमें)—किसी अंशमें भाव यहां स्टेडी होंगे।

ता० २४ मार्च दिनके ५ बजेसे (३।। दिनमें)—रुई १०) १५) टके, चान्दी, एरण्डा, शींगदाणा १।।) २), सोना बिनौला ।।=) ।।।), अलसी गेहूं ।-) ।≡) के लगभग बढ़ना प्रतीत होता है।

ता० २८ मार्च प्रातः ५ बजेसे (३।। दिनमें)—बढ़े हुए भाव अधिक नहीं टिकेंगे, अनुभव यह पाया गया कि ता० २२ मार्चसे आखीर मार्च तक प्रायः रुईके भाव घटते हैं। व्यापार खूब सावधानी से करें।

ता० ३१ मार्च दिनके ११ बजेसे (३।। दिनमें)—पिछले दिनों आई हुई तेजीका उफान यहाँ उतर जाएगा। भाव जैसे चढ़े थे वैसे ही यहां उतर जाएँगे। उतरते भावमें बेचाण करना अच्छा है।

(शेष पृष्ठ ६६ पर)

हेमन्त !

प्रिय पाठकवृन्द ! शरत्प्रभाके सौन्दर्यका दर्शन आप लोगोंने 'श्रीस्वाध्याय' के शरदङ्क (द्वि० व० प्रथमाङ्क) में कर ही लिया। अब आप इस हेमन्ताङ्कमें हेमन्तके सौन्दर्यको भी अवश्य निहारिये। प्रत्येक वस्तु सुन्दर है, किन्तु उस सुन्दरताका आस्वादन करना सर्वसाधारणके हाथकी बात नहीं। जिस प्रकार पूर्णमासीकी रात्रि सुन्दर है उसी प्रकार अमावास्याकी रात्रि भी सुन्दर होती है। किन्तु दोनोंका सौन्दर्य अलग ही अलग प्रकारका है। सहृदय पुरुष दोनोंमें सौन्दर्य-दर्शन करता है और उसके आनन्दका उपभोग भी करता है। आचार्य वामन काव्यकी उपादेयतामें अलङ्कारको कारण मानते हैं, तथा सौन्दर्यको अलङ्कार कहते हैं। (देखिये अलङ्कारसूत्र— "काव्यं ग्राह्यमलङ्कारात्" "सौन्दर्यमलङ्कारः") उपमा, उत्प्रेक्षा, प्रतीप, रूपक आदिके साथ आलङ्कारिकोंने विषादको भी एक अलङ्कार माना है। सहृदय-जन विषादमें भी सौन्दर्य देखते हैं। शरत्के सौन्दर्यसे हेमन्तका सौन्दर्य अलग है। उसमें भी एक आकर्षकता है, चमत्कार है, सौन्दर्य है, सभी कुछ है। श्रीस्वाध्याय-सदन संस्थाके संस्थापक तथा प्रधानाध्यक्ष पूज्यपाद श्री १०८ मान् सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम आचार्य अमृतवाग्भवजी महाराजने इस हेमन्तके यों दर्शन किये—

एकान्ते यत्प्रभावात्सुचरितमतयस्तां हसन्तीं हसन्तीं
सेवन्तेऽन्तःसुतृप्ता भवसुखविमुखास्तेऽपि सन्तो वनान्ते।
कान्तारे यानचिन्तां दधति गृहिजनास्तान्तचित्ता निशान्तात्
हेमन्तो हन्त कान्ते प्रसरति कुटिलो भारते भारतेऽस्मिन् ॥

किसी कामिनीने अपने प्रियतमसे स्वर्णके आभूषण बनानेके लिए कहा। इस पर उस प्रियतमने अपनी प्यारीसे कहा कि प्यारी ! तू जानती नहीं कि वर्तमान भारतमें चारों ओर हेमन्त ऋतु पसर रही है ! प्रियतम कहता है— हे कान्ते ! मुझे बड़े खेदसे कहना पड़ रहा है कि इस समय किसी समयके कान्तिमान् इस भारतमें कुटिल हेमन्त पसर रहा है। देखो इसकी चालें कैसी टेढ़ी हैं। वनान्तमें एकान्तमें सन्त महात्मा रहते हैं। वे सांसारिक सुखोंसे मुख मोड़ चुके हैं। अन्तरात्मा उनकी तृप्त हो चुकी है। उनका चरित्र और निश्चय अत्यन्त सुन्दर है। किन्तु कान्ते ! देखो इस हेमन्तने उन पर भी कैसा अपना प्रभाव डाल रक्खा है। वे सत्पुरुष भी उस हँसनेवाली हसन्ती (अँगीठी) का सेवन करने लग रहे हैं। दूसरी ओर देखो गृहस्थ लोग जंगलमें चलनेकी धार रहे हैं। हेमन्त (सुवर्णका अभाव) के कारण उनका सारा ही गृहस्थीका कार्यभार रुका जा रहा है, इसीसे उनका चित्त अत्यन्त दुखी हो रहा है। वे घर छोड़नेकी सोच रहे हैं। रात्रिके अन्तमें तड़के ही तड़के घर छोड़ देना विवशतासे चाह रहे हैं। ऐसा कुटिल हेमन्त इस सुन्दर भारतमें चारों ओर पसर रहा है। आचार्य चरणकी यह कितनी सुन्दर सूझ है। 'श्रीस्वाध्याय' के प्रेमी पाठक रस भाव अलङ्कार ध्वनि आदिका स्वयं स्वाध्याय करेंगे। हमने तो इसे सुन्दर सूक्ति समझ कर यहाँ प्रकाशित की है।